शुद्धि सनातन है

लेखक—

पं० जे. पी. चौधरी,

(काव्यतीर्थ)

शुद्धि सनातन है

लेखक—

पं० जे० पी० चौधरी,

(काव्यतीर्थ)

प्रकाशक—

चौधरी एन्ड सन्स
पुस्तक विक्रेता तथा प्रकाशक
बनारस सिटी

प्रथम वार १००० } १९२० { मूल्य ॥)
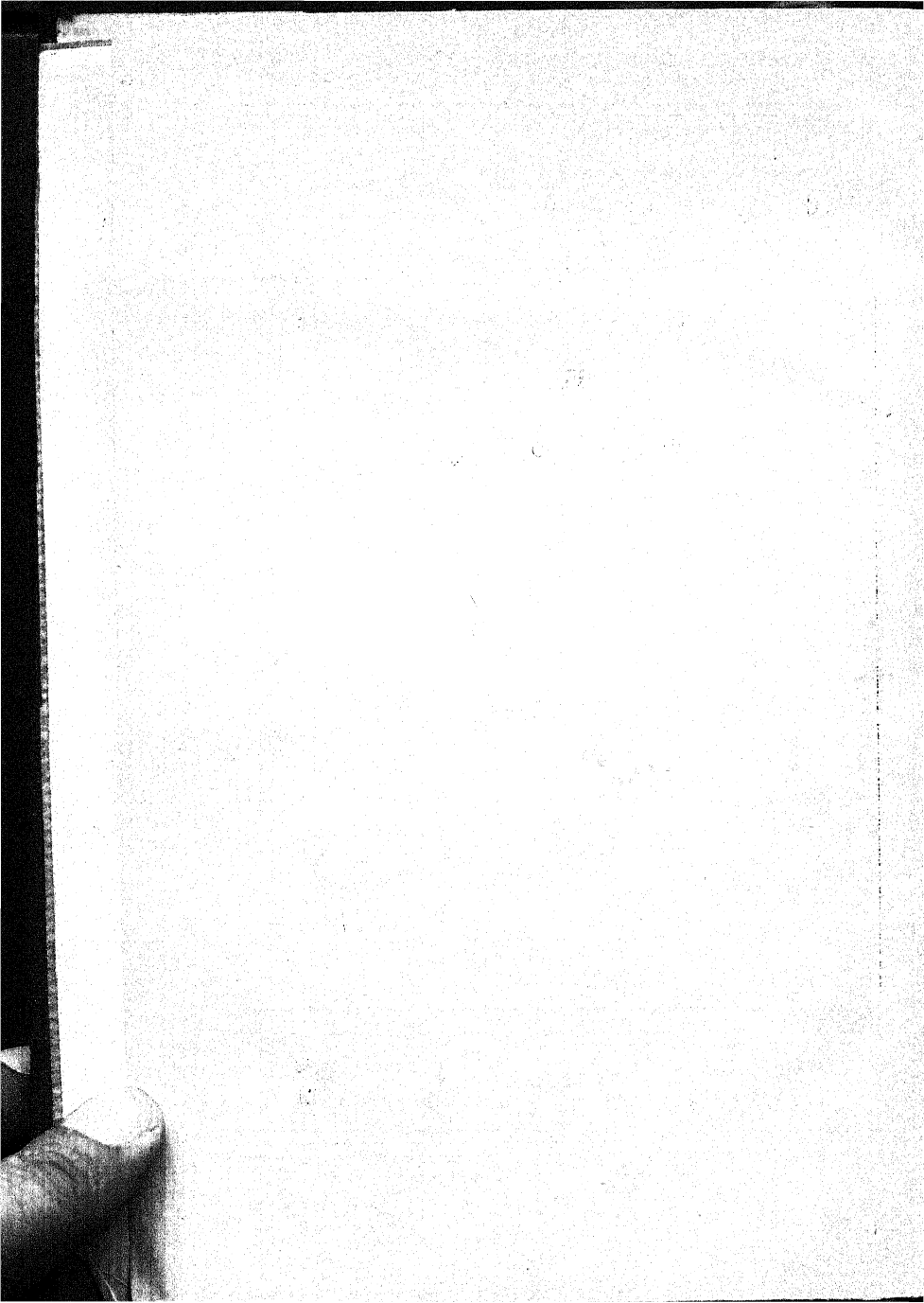
शुद्धि सनातन है

धर्म-अधर्म विवेचन

आजकल जब कोई भी सामाजिक आन्दोलन खड़ा होता है तो सबसे प्रथम धर्म-अधर्म का सवाल खड़ा हो जाता है और इसके लिये लोग शास्त्रों और पुराणों के पन्ने उलटने लग जाते हैं। इससे पता लगता है कि हिन्दू वेद शास्त्र पुराणों के बड़े ही भक्त हैं पर साथ ही यह भी कहना पड़ता है कि वे बुद्धि के शत्रु भी हैं। कोई भी निरपेक्ष मनुष्य यदि हिन्दू शास्त्रों का अध्ययन करेगा तो उसे यह देखकर बड़ा ही आश्चर्य होगा कि हिन्दू-शास्त्रों तथा वर्तमान हिन्दू धर्म में भूमि व आकाश का सा महान् अन्तर है। धर्म मनुष्यों में एकता संगठन और मनुष्यता पैदा करने का एक मार्ग है। परन्तु आजकल धर्म अनैक्यता, पशुता विरोध पैदा करने का एक बड़ा भारी साधन बन गया है। स्वार्थवश अनेक सम्प्रदायों के चल जाने से धर्म ने सम्प्रदायगत होकर विकृत रूप धारण कर लिया है। आजकल इसी विकृत रूप को लोग धर्म मान रहे हैं। यहाँ पर दो एक उदाहरण दे देना अनुचित न होगा। वृद्ध हारीत में लिखा है।

अवैष्णवास्तुये विप्राः पाषण्डास्ते नराधमाः ।
तेषांतु नरके वासः कल्पकोटि शतैरपि ॥
तापादि पंच संस्कारी मंत्र रत्नार्थ तत्ववित् ।
वैष्णवः स जगत्पूज्यो याति विष्णोः परं पदम् ॥
अचक्रधारी यो विप्रो बहुवेदश्रुतोपिवा ।
सजीवन्नेव चाण्डालो मृतो निरयमाप्नुयात् ॥

× × ×

वैष्णव सम्प्रदाय में द्विज का शंख चक्र गदा पद्म धनुष आदि से शरीर को दगवाना पंचसंस्कार कहलाता है। पंच-संस्कार से युक्त होने पर वैष्णव संज्ञा होती है। जो विप्र वैष्णव नहीं है वह नराधम और पाखण्डी है। जो विप्र इससे रहित है वह वेद शास्त्रों का ज्ञाता विद्वान् होने पर भी चाण्डाल है। मरने के बाद नरक में जाता है।

अचक्रधारी विप्रस्तु सर्वकर्मसुगर्हितः ।
अवैष्णवः समापन्नो नरकं चाधिगच्छति ॥
चक्रादिचिह्नरहितं प्राकृतं कलुषान्वितम् ।
अवैष्णवंतुतं दूराच्छ्वपाकमिव संत्यजेत् ॥
अवैष्णवस्तुयो विप्रः श्वपाकादधमः स्मृतः ।
अश्राद्धेयो अपांक्तेयो रौरवं नरकं व्रजेत् ॥

जो विप्र चक्रादिधारी नहीं उसे डोमड़े के समान त्याग दे ! वह डोमड़े से भी अधिक बुरा है। वह श्राद्ध तथा पंक्ति में बैठाकर खिलाने योग्य नहीं। वह नरक में जाता है। इन वैष्णवों के धर्म के विचार से तो शैव शाक्त तथा अन्य किसी भी धर्म के माननेवाले चाहे वे कैसे ही धार्मिक क्यों न हों, सब नरकगामी होते हैं। पाठक विचार करें कि क्या यह धर्म है ?

यह तो वैष्णव सम्प्रदाय की बात हुई अब शक्ति के उपासकों का थोड़ा वर्णन सुनियेः—

ये वा स्तुवन्ति मनुजा अमरान् विमूढ़ा मायागुणैस्तव चतुर्मुखविष्णुरुद्रान्। शुभ्रांशुवह्नियमवायुगणेशमुख्यान् किंत्वा मृते जननि ते प्रभवन्ति कार्यें। प्राप्ते कलावहह दुष्टतरे चकाले नत्वां भजन्ति मनुजा ननुवंचितास्ते। धूर्तैः पुराण चतुरैः हरिशंकराणां सेवापराश्च विहितास्तव निर्मितानाम् ॥ १२ ॥ ज्ञात्वासुरां स्तव वशानसुरार्दितांश्च ये वैभजन्ति भुवि भावयुता विभग्नान्। धृत्वा करे सुविमलंखलु दीपकं ते कूपे पतन्ति-मनुजाविजले ऽति घोरे ॥ १३ ॥ ब्रह्मा हरश्चहरि रप्यनिशं शरण्यं पादाम्बुजं तव भजन्ति सुरास्तथान्ये। तद्वैनयेऽल्पमतयो मनसा भजन्ति भ्रान्ताः पतन्ति सततं भवसागरे ते ॥ १५ ॥ शप्तोहरिस्तु भृगुणा कुपितेन कामं मीनो बभूव कमठः खलु सूकरस्तु। पश्चान्नृसिंह इति यच्छलकृत धरायां तान् सेवतांजननिमृत्यु भयंनकिं स्यात्। देवी० स्कन्द ५ अ ॥१६॥

जो लोग ब्रह्मा विष्णु महादेव चन्द्र अग्नि यम वायु गणेश की स्तुति प्रार्थना करते हैं वे विमूढ़ हैं। हे जननि बिना तुम्हारे क्या वे अपने कामों को कर सकते हैं? अहह! इस दुष्टतर-काल कलियुग के प्राप्त होने पर जो लोग तुम्हें नहीं भजते वे ठगे गये हैं। धूर्त पौराणिकों ने तुम्हारे बनाये हुए हरि शङ्कर आदि देवताओं की सेवा विहित कर दी। इस प्रकार सुरों को तुम्हारे अधीन जानकर भी भावयुक्त होकर जो उनको भजते हैं वे हाथ में सुविमल दीपक लेकर मानो जलहीन भयानक कूप में गिरते हैं। ब्रह्मा विष्णु महादेव तथा दूसरे देवता तुम्हारे कमल रूपी चरण की सेवा करते हैं। उसको जो मूर्ख नहीं भजते हैं वे भवसागर में गिरते पड़ते हैं। भृगु के शाप से हरि ने मछली

कच्छप शूकरादि का जन्म ग्रहण किया। ऐसे देवों को भजने से मृत्यु का भय क्यों न होगा ?

ऐसे ही हरएक सम्प्रदाय के लोगों ने साम्प्रदायिक विष उगल करके समाज की धार्मिक एकता को नष्ट कर डाला है। यहाँ थोड़ा सा नमूना इसलिये दे दिया है कि स्वार्थी लोग इस विषय में ननुनच न कर सकें। अधर्म ने धर्म का जामा पहन लिया है। लोग अधर्म को धर्म समझकर कर रहे हैं। जब अधर्म धर्म का वेष धारण कर लेता है तब वह और अधिक भयानक हो जाता है। क्योंकि उसमें पाखण्ड का मिश्रण अधिक होता है। जिस श्रीकृष्ण को लोग अवतार मानते हैं उसी को नचाकर पैसा वसूल करते हैं। चीर-हरण की नंगी तस्वीरें बेचकर अपने नैतिक पतन की घोषणा कर रहे हैं। अवतार मानते हुये भी बुद्ध को नास्तिक बतलाते हैं। यह गिरावट नहीं तो क्या है ? दीपावली पर जूवा खेलना धर्म बतलाया जाता है। बलात्कार से विधवाओं को ब्रह्मचर्य पालन करवाना तो चाहते हैं परन्तु स्वयं नहीं करते। वर्णव्यवस्था जन्मना जन्मना चिल्लाते हैं परन्तु शास्त्रों के अनुसार चलते नहीं। जहाँ स्त्रियों का गुरु केवल पति कहा गया है, वहाँ कान फूंकने के बहाने स्त्रियों को भी चेली बनाने लगे। विवाह की व्यवस्था मनुष्य-समाज के लिये है न कि पशु वा जड़ पदार्थों के लिये, परन्तु आज कूआँ बावड़ी, गाय बैल का भी विवाह पण्डितों ने जारी कर दिया है। इधर छोटेपन की शादी की इतनी भरमार है कि सन् १९२१ की मनुष्य-गणना में पाँच वर्ष की ७ लाख ३६ हज़ार २४८ बालिकायें विधवा लिखी गई हैं। ये विधवायें भ्रष्ट होकर भले ही विधर्मी बन जावें परन्तु उनका विवाह कर देना सनातनधर्म के विरूद्ध पापमय बतलाया जाता

है। परन्तु ५० । ५०, ६० । ६० वर्षों के बुड्ढों का विवाह दश-दश वर्ष की बालिकाओं के साथ धर्ममय बतलाया जाता है। इससे बढ़कर हिन्दुओं की और क्या गिरावट हो सकती है । क्या यह सब धर्म है ? नहीं,

"धर्म क्या है" इसपर एक महर्षि लिखते हैं ।

यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः"

जिससे "अभ्युदय" इस लोक में उन्नति और मरने के बाद "निश्रेयस" मुक्ति प्राप्त हो वही धर्म है । साधारण से साधारण आदमी समझ सकता है कि कौनसा काम करने से इस लोक में हमारी उन्नति हो सकती है। आजकल हिन्दू धर्म में बालविवाह वृद्धविवाह छूआछूत अपात्रदान आदि धर्म माने जा रहे हैं पर क्या कोई भी आदमी अपने हृदय पर हाथ रखकर कह सकता है कि उक्त कामों से समाज की अवनति हो रही है या हिन्दू समाज उन्नति कर रहा है ? पर हिन्दू लोग इसपर विचार नहीं करते और अन्धविश्वास के ऐसे गुलाम बन गये हैं कि धर्म के काम में बुद्धि से काम लेना पाप समझते हैं। हिन्दुओं की गुलामी का मूल कारण यही है। वीरता, साहस, त्याग सहिष्णुता आदि गुणों के रहते हुये भी आज हिन्दू जाति सर्वत्र ठोकर खा रही है इसका कारण यही है कि यह जाति बुद्धि से काम न लेकर अपने सद्गुणों का दुरुपयोग कर रही है। संसार परिवर्तनशील है, शरीर नाशवान् है, इस प्रकार के वेदान्त छाँटनेवाले बहुत हैं। शास्त्रों की ख़ूब दोहाई देते हैं परन्तु उसकी आज्ञा के अनुकूल कोई चलता नहीं। कहते हैं कि धर्म में परिवर्तन नहीं हो सकता पर धर्म क्या है बेचारे जानते ही नहीं । इन महात्माओं से कोई पूछे कि तुम शास्त्र की दोहाई तो बहुत देते हो पर बतलाओ तो गाज़ी मियाँ पांचोपीर

ताजिया और कब्रों की पूजा तुम्हारे किस शास्त्र में है? पहले नियोग धर्म माना जाता था पर अब अधर्म माना जाता है। पहले क्षत्रिय लोग कन्या छीनकर या चुराकर ले आते थे और शादी कर लेते थे यह धर्म था इसे बुरा कोई नहीं कहता था पर क्या आजकल ऐसा करनेवाला पापी नहीं कहा जाता? पहले चोरी करनेवाले का हाथ कटवा लिया जाता था, व्यभिचारी का लिंगच्छेद करा दिया जाता था पर क्या अब वह धर्म रहा? इसलिये जो लोग यह कहते हैं कि धर्म में परिवर्तन नहीं होता, वे शास्त्र से अनभिज्ञ केवल रूढ़ि के गुलाम हैं। ऐसे लोगों से देश का क्या कल्याण हो सकता है? यदि इनसे कोई पूछता है कि गाज़ी मियाँ तुम्हारे किस शास्त्र में हैं जिनकी पूजा अपने देवताओं से भी बढ़कर करते हो तो बस बाप-दादों का नाम ले लेंगे और कहेंगे कि क्या बाप दादे बेवकूफ थे? जो क़ौम इतनी अन्धी बन गई हो कि उसे मुर्दे और ज़िन्दे में विवेक न हो उसके आगे शास्त्रों की बात रखना मानो "भैंस के आगे बेन बजावे भैंस बैठ पगुराय" की कहावत को चरितार्थ करना है। परन्तु समाज में कुछ ऐसे लोग भी हैं जो वास्तव में इसके जिज्ञासु हैं उन्हीं के लिये हमारा यह प्रयत्न है।

आजकल वेद शास्त्र विरुद्ध जाति की रूढ़ियों ने हिन्दुओं को ऐसा पंगुल बना दिया है कि वे जानते हुये भी सच्ची बात नहीं कर सकते। आर्य-समाज के लोग भी इससे अछूत नहीं बचे हैं, वे भी हिन्दुओं के समान रूढ़ियों के गुलाम बने बैठे हैं। बिना हिन्दुओं को साथ लिये ये बेचारे आगे चल ही नहीं सकते। जब आर्यों की यह दशा है तो हिंदुओं की दशा का क्या कहना? जहाँ अविद्या और रूढ़ि दोनों ने इन्हें जकड़ रखा है। अनेक रूढ़ियों में एक रूढ़ी छूवा छूत है।

छूवाछूत ने हिन्दुओं का पैर काट डाला है इससे हिन्दू पंगुल बनते जा रहे हैं पर इन्हें सूझ नहीं रहा है। ये छूवाछूत को शास्त्र की बात मानते हैं परन्तु यह उनकी अज्ञानता है। यह बात आगे दिखलायी जायगी। इस छूवाछूत के कारण हिन्दुओं की संख्या घटते घटते अब केवल २२ करोड़ रह गई है। किसी समय हिन्दुओं की संख्या ६० करोड़ थी पर इस चूल्हेपन्थी धर्म ने इसे इतना सिकोड़ा कि सिकुड़ते सिकुड़ते अब भारत में २२ करोड़ हिन्दू रह गये। हिन्दुओं ने बाक़ा सीखा है जोड़ तो इन्होंने सीखा ही नहीं। इस बीमारी से प्रत्येक वर्ष इनकी संख्या घटती जा रही है। सन् १९२१ की मनुष्य गणना से पता लगता है कि दश वर्ष में इस छूत की बीमारी से १ करोड़ बारह लाख विधर्मी बन गये।

ब्राह्मण ३४०७१७ क्षत्रिय २३००० कुर्मी १२८३७०६ डोम ५०९८०० कोरी ६७२३८४ लोहार ५२४०६४ सोनार १२५३६७ कुलजोड़ = ११२०००००

सन् १८२१ ईस्वी में हिन्दुओं की संख्या ७४ फी सदी थी सन् १९२१ की मनुष्यगणना में ५ फी सदी कम हो गई और हिन्दुओं की संख्या ६९ फी सदी रह गई। यदि इसी क्रम से ह्रास मान लिया जाय तो इस ६९ फी सदी के ह्रास होने के लिये कुल १४ × ३० = ४२० वर्ष लगेंगे।

इससे बढ़कर हमारे ह्रास का और क्या प्रमाण हो सकता है। अनेक भोंदूबसन्त कहा करते हैं कि हिन्दू जाति समुद्र है उन्हें उक्त हिसाब तथा ह्रास को देख कर दिमाग ठीक कर लेना चाहिये। ये लोग अरब से तो आये नहीं, हमारी नालायकी और ब्राह्मणों के ढकोसले से ये हममें से ही निकल कर हमारे दुश्मन बन बैठे हैं। गोरक्षक से गोभक्षक हमारे ही कारण से बने हैं।

शास्त्रों में प्रायश्चित्त भरा पड़ा है परन्तु वह सब पोथी के बैगन समान इनके लिये निरर्थक थे इस विषय पर आगे लिखा जायगा।

इस पतन के मूल कारण वर्णों के गुरु ब्राह्मण ही लोग हैं। शास्त्र की व्यवस्था इनके हाथ में थी। शास्त्रों में शुद्धि भरी पड़ी है परन्तु अपने पाखण्ड के कारण पण्डितों ने हिन्दू जाति का सर्वनाश कर डाला। चाहता तो था कि अग्नि के समान अपना रंग देकर अपने समान पवित्र बना लेते पर विद्या के अभाव से स्वयं अपना रंग देना तो दूर रहा अपने भी नष्ट-भ्रष्ट हो गये। ब्राह्मणों की उदासीनता से कैसे कैसे अनर्थ हुये इसे उदाहरणों द्वारा जनता के सामने रखना परमावश्यक प्रतीत होता है। इससे कोई यह न समझ बैठे कि मैं ब्राह्मणों की निन्दा कर रहा हूँ यह तो सत्य बात है। अब भी यदि ब्राह्मणमण्डली चेत जाय तो कम-से-कम कलंक का टीका सिर से धो जावे। बुद्धिमान् वे ही हैं जो पूर्व की गलतियों से लाभ उठावे, न कि देखता हुआ भी ग़लती पर ग़लती करता जावे। मैं आप लोगों के सामने ब्राह्मणों के वर्तमान भूल का कुछ नमूना पेश करना चाहता हूँ।

(१) पहले बगाल को लीजिये, बंगाल में मुसलमान ज्यादा क्यों हैं? जिस समय की यह घटना है उस समय बंगाल की राजधानी गौड़ नगरी थी। उस समय इसके अधीश्वर थे सुलतान सय्यद हुसेन शाह। उनके चार बेगमें और बहुत सी लड़कियाँ थीं। जेठी शाहज़ादियाँ जब उमर पाकर विवाह योग्य हुईं, तो उनके योग्य मुसलमानों में वर न पाकर उनकी दृष्टि ऊँचे कुलके हिन्दुओं की ओर गई। बंगाल के बड़े-बड़े ज़मीन्दारों को साल में कम-से-कम एक बार नज़राना लेकर सुलतान की ख़िदमत में हाज़िर होना पड़ता था। एक टकिया के ब्राह्मण राजा अपने

दोनों नवयुवक पुत्रों को लेकर राजधानी में आये। दोनों कुमारों की अनूठी सुन्दरता देखकर सुलतान की इच्छा उन्हें दामाद बनाने की हुई। दोनों राजकुमार, जब कि वे नगर में भ्रमण करने के लिये निकले थे, पकड़कर हिरासत में ले लिये गये और इनके पिता राजा मदन को बुला कर अकेले में सुलतान ने फरमाया कि तुम्हारे पुत्र इस लिये पकड़ लिये गये हैं कि उनके साथ मेरी दोनों जेठी शाहज़ादियों की शादी होगी। इन शादियों को अगर तुम चाहो तो हिन्दू रीति से कर सकते हो; परन्तु यदि तुम ऐसा करना स्वीकार न करोगे तो मुसलमानी रीति से इनका विवाह हो जायगा। मुसलमान की लड़कियों के साथ हिन्दूरीति से भी शादियाँ हो सकती हैं यह बात राजा मदन की समझ में न आई और अन्त में दोनों राजकुमार मुसलमान बना लिये गये और उनका निकाह उन शाहज़ादियों के साथ पढ़ाया गया। इस प्रकार दोनों राजकुमार सदा के लिये हिन्दू धर्म से च्युत हो गये।

(२) राजा गणेश बंगाल के एक पराक्रमी राजा हो गये हैं। गौड़ की गद्दी के लिये अज़ीमशाह और उसके भाई के बीच में परस्पर द्वन्द्व चलता था। राजा गणेश ने अज़ीमशाह का पक्ष लेकर उसके भाई को परास्त किया। इसके कुछ काल के बाद अज़ीमशाह की मृत्यु हो गई। राजा गणेश ने गौड़ की गद्दी अपने अधिकार में कर ली और जीवन पर्यन्त उसके अधीश्वर रहे। जब वे गौड़ के सिंहासन पर आरूढ़ हुये तो उस समय पूर्व सुलतान की एक परम सुन्दरी कन्या आसमान तारा थी। आसमानतारा और राजा गणेश के नवयुवक कुमार यदु में परस्पर प्रेम हो गया। जब राजा गणेश का जीवनान्त हो गया तो आसमान तारा ने यदु से हिन्दू रीति के अनुसार विवाह

करने के लिये प्रस्ताव किया। यदु ने बड़े-बड़े पण्डितों को बुला कर इसकी व्यवस्था माँगी; पर पण्डित लोग इसकी व्यवस्था न कर सके इसलिये अन्त में यदु ने मुसलमान बन कर आसमान तारा के साथ निकाह किया।

(३) कालाचाँद बड़ा ही धार्मिक व्यक्ति था। वह प्रति दिन प्रातः काल, आह्निक कृत्य के लिये सुलतान के महल के बग़लवाली सड़क से नदी की ओर आता था। उसे रोज़ आँख भर निहारते निहारते सुलतान की प्यारी कन्या दुलारी उसकी सुन्दरता पर आसक्त हो गई। और इसकी सूचना बेगम को दी गई। उच्च ब्राह्मण कुलोत्पन्न जामाता की कल्पना कर बेगम और सुलतान फूले न समाये। कालाचान्द के सामने शादी का प्रस्ताव पेश किया गया। स्वधर्माभिमानी कालाचांद ने नाक भौं सिकोड़ कर इसे अस्वीकार कर दिया। अन्त में सुलतान ने क्रोध के वशीभूत होकर कालाचांद को गिरफ़ार करवाया और उसे प्राणदण्ड की आज्ञा दी। जब वह वधस्थान पर पहुँचाया गया तो सुलतान की शाहज़ादी दौड़कर उसके गले में लिपट गई और रोकर जल्लादों से बोली—"पहले मेरे गले पर छूरी चलाओ"। जो काम सुलतान का प्रस्ताव और अतुल धन सम्पति का प्रलोभन न कर सका था, वह काम इस घटना ने क्षणभर में कर दिखाया। कालचांद इस माया से मोम की भाँति पिघल कर अपने निश्चय से टल गया और हिन्दू रीति नीति से उसने दुलारी का पाणिग्रहण करना स्वीकार कर लिया। परन्तु ब्याह कराने वाले पण्डित वहाँ न मिले। अन्त में वह जगदीशपुरी गया और सात दिन तक निराहार-निर्जल रह कर मन्दिर के द्वार पर सत्याग्रह करके बैठा, पर पुजारियों ने विवाह की व्यवस्था देना तो दूर, उसे मन्दिर के अन्दर भी प्रविष्ट न होने दिया। आख़िरकार

कालाचांद हिन्दू धर्म और जाति को शाप देता हुआ वापिस लौटा और मुसलमान बन कर दुलारी से शादी कर ली। फिर उसने अपने जीवन का उद्देश्य ज़बर्दस्ती हिन्दुओं को मुसलमान बनाना, हिन्दू देव-मन्दिर तोड़ना आदि बना लिया। इसके कारण हिन्दू जाति को असीम क्षति पहुँची। कालाचांद के बदले लोग इसे कालापहाड़ के नाम से पुकारने लगे। इसका मुसलमानी नाम महमूद फर्मूली था।

(४) कालिदास गजदानी कुलीन हिन्दू थे। बंगाल के अन्तिम सुलतान के प्रधान मंत्री थे। गजदानी साहब सुन्दर थे और उनका शरीर सुडौल था। सुलतान की रूपवती कन्या का जी इनके रूप पर ललच गया; परन्तु वह इन्हें अपने प्रेम-पाश में फँसा न सकी और अन्त में अखाद्य पदार्थ खिला कर उन्हें भ्रष्ट किया और इसकी सूचना भी इन्हें दे दी। गजदानी साहब फिर शुद्ध होकर हिन्दू धर्म में आ सकते थे; परन्तु पण्डितों ने इसकी व्यवस्था उन्हें न दी इसलिये अन्त में लाचार होकर मुसलमान बन उसका पाणिग्रहण किया।

अब मदरास की दशा सुनिये। यहाँ एक नहीं दो दो झगड़े हैं। एक ब्राह्मण और अब्राह्मण का झगड़ा, दूसरे अछूतों के साथ अत्याचार। हमारे देश में अछूतों की उतनी बुरी दशा नहीं है, जितनी बुरी दशा मदरास के परिया आदि अस्पृश्य जातियों की है। वहाँ छूत का भूत इतना भयानक है कि परिया आदि आम सड़क पर नहीं चल सकते। कहीं पर किसी अछूत के लिये २० गज, किसी के लिये ३० गज, और किसी के लिये ४० गज की दूरी पर रहने का नियम है। मानों ये कुत्ते बिल्ली आदि पशुओं से भी बदतर हैं। हमारे यहाँ तो चमारादिकों को छू कर कोई स्नान नहीं करता (देहातों की बात मैं कह रहा हूँ शहरों की

नहीं) पर उस देश में तो बात करने में जाति चली जाती है और ब्राह्मण प्रायश्चित्त के योग्य बन जाता है। ईसाई मुसलमानों को सड़कों पर चलने में कोई रोक टोक नहीं क्योंकि उन्हें रोकें तो वे सिर तोड़ डालें परन्तु चोटी रखते हुये परिया आदि कौम सड़क पर नहीं चल सकती; परन्तु यदि वे चोटी कटाकर गोरक्षक के स्थान में गोभक्षक बन जाते हैं तो उनकी सब छूत दूर हो जाती है। मानों सब छूत चोटी और गोरक्षा में है। मलाबार में केवल छू जाने से ही छूत नहीं लगती किन्तु वहाँ देखने से भी छूत लग जाती है। नायड़ी जाति के हिन्दू को यदि कोई ब्राह्मण देख ले तो स्नान करना पड़ता है। इड़वा थिया और चसमा जाति के लोग यदि ४० गज के फासिले पर आ जावें तो छूत लग जाय। ब्राह्मण मन्दिरों की सड़कों पर चलने का इन्हें अधिकार नहीं किन्तु ईसाई मुसलमानों को है। किसी तालाब के २० फुट पास होकर इनके जाने से सारा तालाब अशुद्ध हो हो जाता है। १९२१ की मनुष्यगणना में यहाँ १४ प्रतिशतक ईसाई बढ़े। ये लोग ब्राह्मणों से अपमानित होकर इस समय हिन्दू नाम से जान छुड़ाना चाहते हैं। यह हाल मद्रास का २० वीं शताब्दी का है। अब आप समझ सकते हैं कि ३०० वर्ष पूर्व वहाँ की क्या दशा रही होगी।

जिस देश वा जिस धर्म में रह कर मनुष्य को मनुष्योचित अधिकार न मिले उस देश वा धर्म में रहना मनुष्य के लिये उचित नहीं है। जिस देश में मनुष्य का बच्चा कुत्ते और बिल्लियों से भी गया बीता समझा जाय उस देश व धर्म को लात मार कर अलग हो जाने ही में आत्मकल्याण हो सकता है परन्तु तो भी वे लोग हिन्दू धर्म के इतने पक्के अनुयायी थे कि क्रिस्तान होने पर भी उनके अब भी चोटी मौजूद है। यहां पर

क्रिश्चियानटी के फैलने की विचित्र कथा है। रावर्ट डी नोबुली नाम के एक फ्रेञ्च क्रिश्चियन ने मद्रास में धर्म प्रचार करने के विचार से संस्कृत विद्या का अभ्यास किया और एक पुस्तक संस्कृत में लिखी जिसका नाम यजुर्वेद रखा। चूंकि लोगों का वेद पर बड़ा विश्वास था, इसलिये सब लोग उसके उपदेश को वेद के नाम से सुनने लगे और उसके अनुयायी होने लगे। जब प्रायः ८००—९०० आदमी उसके उपदेश के माननेवाले हो गये तो उसने हिन्दुओं में यह प्रकट कर दिया कि ये लोग ईसाई हो गये हैं। बस क्या था उन बेचारों ने कितना ही कहा कि हम लोगों को वेद के नाम से उपदेश दिया गया है, हम लोग ईसाई नहीं हुये हैं, परन्तु हिन्दू समाज ने न माना और उन्हें जाति से अलग कर दिया जिसका नतीजा आज आँख के सामने दिखाई दे रहा है। मद्रास में सबसे अधिक ईसाइयत फैली हुई है। हिन्दुओं की इस कमजोरी से मोपलों ने बड़ा लाभ उठाया। जब वह अछूतों को सताते और मुसलमान बनाते थे तो ऊँची जाति के हिन्दू कुछ न बोलते थे परन्तु जब उन्हें मुसलमान बना लिया तब वे सब मिलकर इन निकम्मे ब्राह्मणों की भी खबर लेने लगे। मोपला-विद्रोह में वहाँ के अनेक ब्राह्मण मुसलमान बना लिये गये। यदि ये लोग शास्त्रों के शरण में जाते तो क्या एक भी ईसाई या मुसलमान वहाँ बनने पाता? ये शास्त्र व्यवसायी लोग दोहाई तो देते हैं परन्तु तदनुकूल करते नहीं। यही भारी ऐब इनमें है।

चौदहवीं शताब्दी के अन्त में जब कि मुसलमानी सल्तनत अभी तक न जम गई थी, सिकन्दर शाह नामक एक आदमी काश्मीर में राजा के यहाँ नौकर हुआ। उन्हीं में से शाह मीर, जो सिकन्दर का मूरिश था उस हिन्दू राजा को मार कर राजा

बन बैठा। उसी सिकन्दर शाह ने वहाँ के पण्डितों को बुलाकर कहा कि मैंने आजतक अपना मज़हब ठीक नहीं किया है। मैं अपना मज़हब ठीक करना चाहता हूँ। यदि आप लोग अपने मज़हब में ले लें तो शरीक हो जाऊँ। उन्होंने कहा कि हिन्दू तो पैदा होने से ही होता है आप हमारे मज़हब में नहीं लिये जा सकते। उसने मौलवियों से पूछा कि आप लोग हमें अपने मज़-हब में ले सकते हैं या नहीं ? फौरन जवाब मिला कि हाँ हुजूर ले सकते हैं। वह मुसलमान हो गया। मौलवियों के सलाह से उसने सैकड़ों पण्डितों को बोरे में बन्द करा करा कर झेलम नदी में डुबवा दिया और वहाँ के हिन्दू बाशिन्दे प्रायः सबके सब मुसलमान बना लिये गये। काश्मीर देश में मुसलमानों की संख्या १९२१ में १३२४४०३, हिन्दुओं की ६४५६४, सिक्खों की १७५४२ थी।

ये बातें क्यों हुई ? धर्मशास्त्र उस समय क्या न थे? थे अवश्य, परन्तु धर्मशास्त्रों की बातों को त्याग कर हिन्दू लोग रूढ़ि के गुलाम बन गये थे और अब भी रूढ़ि के गुलाम बने बैठे हैं। इसलिये विधर्मियों की शुद्धि के पहले हिन्दुओं की शुद्धि की आवश्यकता है। जब तक हिन्दुओं की शुद्धि नहीं होती तब तक विधर्मियों की शुद्धि व्यर्थ है, हिन्दुओं की पाचनशक्ति एकदम नष्ट हो गई। वैसे तो हिन्दू, बाप दादे की लकीर के बड़े भक्त हैं; परन्तु बाप दादों की तरह हाज़मा इनमें न रहा। आगे इसका प्रमाण दिया जावेगा।

आजकल के पण्डित लोग धर्मशास्त्र के पूर्ण विद्वान् होते हुये भी रूढ़ि के गुलाम बने हुये हैं इस लिये खुले दिल से जनता के सामने धर्म के तत्व को नहीं रखते। जो धर्म हमारे जीवन को नष्ट करे, हमारी सामाजिक नैतिक उन्नति में बाधक हो वह

धर्म नहीं अधर्म है, उसका नाश हो जाना ही जनता के लिये श्रेयस्कर है। कणाद ने धर्म का लक्षण बतलाया है:—यतोऽभ्युदयनिः श्रेयस सिद्धिः सधर्मः—जिससे इस लोक में उन्नति तथा मरने के बाद मुक्ति प्राप्त हो वही धर्म है। मैं बतला चुका हूँ कि वर्तमान रूढ़ि मूलक धर्म के कारण हिन्दुओं की सख्या भारत में ११ करोड़ घट गई, इससे सिद्ध होता है कि वर्तमान धर्म अधर्म का जामा पहन कर जनता में फैला हुआ है। उन्नति के स्थान में ह्रास हुआ। हमारा राजनैतिक पतन तो यहाँ तक हुआ कि हम गुलाम बन गये। फिर वर्तमान हिन्दू धर्म, अधर्म नहीं तो क्या है? जिस धर्म के नाम पर एक एक वर्ष की लड़कियाँ राँड़ बैठी हों, जिस धर्म के नाम पर ५ वर्ष तक की १५ हजार विधवायें मौजूद हों, वह धर्म क्या अधर्म नहीं है? जिस धर्म के नाम पर करोड़ों पशु प्रत्येक वर्ष देवी देवताओं को बलि दिये जाते हैं, वह धर्म यदि धर्म कहा जाय तो अधर्म किसका नाम होगा? जिस धर्म में ६०।६० वर्ष के वृद्ध दश दश वर्ष की कन्या से विवाह कर वह धर्म अधर्म का बाप है या नहीं? कितना गिनाऊँ, वर्तमान हिन्दू धर्म कोई धर्म नहीं है, उसने अधर्म का जामा पहन कर देश का सर्वनाश कर डाला है। ऐसे ही धर्म के पोषक हमारे अनेक सनातनी हिन्दू भाई शुद्धि के नाम से हिचकते हैं और इस प्रथा को जातिभ्रंशकारी वेद-शास्त्रपुराणेतिहास तथा शिष्टाचार के विरुद्ध समझकर अधर्म कहते हैं। पर क्या सत्यतः लोगों का विचार ठीक है? क्या इससे वर्णसंकरता पैदा होती है? क्या शुद्धि वेद शास्त्र विरुद्ध है? क्या यह पुराणेतिहास के अनुकूल नहीं हैं? क्या लोकाचार शिष्टाचार के विरुद्ध है? अथवा लोकाचार से अनुमोदित न होने से वेद-शास्त्र के अनुकूल होने पर भी शुद्धि त्याज्य है?

वास्तव में इन्हीं प्रश्नों का ठीक ठीक उत्तर लोगों की जिज्ञासा को शान्तिदायक हो सकता है। हम इन्हीं प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयत्न इस ग्रन्थ में करेंगे, शुद्धि क्या पदार्थ है? पहले इसी प्रश्न को हल कर लेना आवश्यक है क्योंकि प्रथम भूल यहीं से होती है। अनेक लोग दाढ़ी मुड़वाकर चोटी रखवा देना मात्र ही शुद्धि समझ बैठे हैं। परन्तु बात ऐसी नहीं है।

शास्त्र बतलाता है [दक्षस्मृति अ० ५]

शौचंच द्विविधं प्रोक्तं बाह्याभ्यन्तरं तथा।
मृज्जलाभ्यां स्मृतं बाह्यं भावशुद्धि स्तथान्तरम्॥
अशौचाद्धि वर बाह्यं तस्मादभ्यन्तरं वरम्।
उभाभ्यांतु शुचिर्यस्तु स शुचिर्नेतरः शुचिः॥

शुद्धि दो प्रकार की होती है एक बाह्य, दूसरी अभ्यन्तर, बाहर की शुद्धि मिट्टी और जल से होती है और भीतर की शुद्धि भाव की शुद्धि से होती है। अशुद्ध रहने की अपेक्षा बाहरी शुद्धि अच्छी है बाहरी शुद्धि से भीतरी शुद्धि उत्तम है परन्तु जो बाहर भीतर दोनों से शुद्ध है वास्तव में वही शुद्ध है दूसरा नहीं। इस उक्त प्रमाण से हमारे शास्त्रों के श्रद्धालु भाई समझ गये होंगे कि शुद्धि का तत्व क्या है?

बाह्य शुद्धि की अपेक्षा आन्तरिक शुद्धि की अत्यंत आवश्यकता है आन्तरिक शुद्धि परस्पर प्रेम का कारण है। हिन्दुओं में बाह्य शुद्धि सीमा के पार तक चली गई है। गोपालमन्दिर-वालों ने तो बाह्य शुद्धि का अत्यन्त कर दिया है। ये भलेमानुस लकड़ी तक धोकर चूल्हे में जलाते हैं पर चीनी नहीं धोते जो दलितों, मुसलमानों आदि के पैरों तले कुचलकर बनाई जाती है। पर इसमें आन्तरिक शुद्धि लेशमात्र भी नहीं जब कि इन्होंने दूसरों से घृणा करने का ही पाठ सीखा है। यही हाल कमोवेश

समस्त हिन्दू संसार का है।

* सनातनी गोल माल *

पूर्वजों का अभिमान हमें किसीसे कम नहीं है परन्तु अन्धे के समान उनकी भली बुरी सभी बातोंका अनुकरण करना हम उचित नहीं समझते। जिन लोगोंने अपने तेज और ज्ञान से एक समय सारे संसार को दीप्त कर दिया था उन्हीं की सन्तान होकर हम बात बात में अनुकरणप्रिय बनकर अपना नाश नहीं करना चाहते।

उन ऋषियों और बीरों की योग्यसन्तान हम तभी होंगे जब कालमहिमा को समझ कर हम भी उनके जैसा पराक्रम कर दिखावेंगे। स्वयंदास बनकर हम तेजस्वी पुरुषों को बदनाम करना नहीं चाहते। हमें धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि सब विषयोंपर स्वतंत्र ही विचार करना पड़ेगा। जिस अवस्थामें उन लोगों ने व्यवस्था दी थी, वह अवस्था आज नहीं है अतः वह व्यवस्था भी आज काम नहीं दे सकती। अवस्था देखकर नवीन व्यवस्था दिये बिना हमारा काम नहीं चल सकता। संस्कृत साहित्यकी आलोचना जो कोई पुरुष सरल चित्तसे करेगा उसके ध्यान में यह बात आ जायगी कि प्राचीन कालके मुनियों ने भिन्न भिन्न समय में भिन्न भिन्न प्रकारकी व्यवस्था दी है। हिन्दू धर्मकी विशेषता ही यह है कि अन्य धर्मों के समान इसके नियम कठोरता के साथ संकुचित सीमाके भीतर बँधे हुये नहीं हैं। ब्रह्म को निर्गुण मानने वाला भी हिन्दू है और सगुण माननेवाला भी हिन्दू,उसको निराकार

माननेवाला भी हिन्दू है और साकार अनन्तमूर्ति माननेवाला भी हिन्दू, ज्ञान के रूप में और शक्ति के रूप में, पुरुष के रूपमें और स्त्री के रूपमें, जनक के रूपमें और जननीके रूप में, पति के रूपमें और मित्रके रूपमें, नाना रूपोंमें और नानाविध भावों से उसकी उपासना करने वाले सभी हिन्दू हैं। ज्ञानमार्ग, योग मार्ग, भक्ति मार्ग, कर्म मार्ग आदि अनेक प्रकारके मार्ग उसी एक स्थान को जाते हैं, यही हिन्दूका विश्वास है। सामाजिक आचार विचार में भी यही बात पायी जाती है। कोई मद्य-मांसका सेवन करता है, कोई इसे पाप समझता है। कोई अहिंसाको धर्म समझता है। किसीकी उपासना जीव-बलिके बिना होतीही नहीं, दक्षिण—विशेषकर मद्रासमें मामा की लड़की से ब्याह करने की रीति आज भी ब्राह्मणों में प्रचलित है पर उत्तर भारतमें कोई यही कर्म करे तो वह पतित समझा जायगा। दक्षिण के ब्राह्मण प्याज मजे में खाते हैं पर मांसका स्पर्श तक नहीं करते। उत्तर भारत में मांस चलता है, प्याज नहीं चलता। मद्रास के ब्राह्मण नायर वा शूद्र जाति की लड़कियों से ब्याह करते हैं—यह बात हालमें ही समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई थी—पर वे ब्राह्मणत्व से च्युत नहीं होते। दक्षिण में महाराष्ट्र, द्रविड़, तैलंग आदि ब्राह्मण परस्पर भात भी खाते हैं, पर उत्तर में तीन कनौजिया तेरह चूल्हा" प्रसिद्ध ही है। तथापि ये सब ब्राह्मण हैं, सब अपने को उन्हीं ऋषियों का सन्तान समझते हैं और सबकी धारणा यही है कि हममें जो आचार प्रचलित है वही शास्त्रानुमोदित है। व्यवहार में वेश्यागमन कहीं पातित्यका कारण नहीं समझा जाता। और आगे चलिये। जिन राजाओं ने मुस-

लमानोंसे बेटीका संबंध किया था उनके वंशज आजभी सनातनधर्म के स्तम्भ समझे जाते हैं। यवनोसंसर्ग करके भी राजा हरिसिंह और महाराज तुकोजी राव होलकर अभी सनातनधर्मी ही बने हुये हैं। राजा महाराज और अमीर रईस प्रतिवर्ष विलायत की यात्रा कर आते हैं और उनके यहाँ दान धर्म, यज्ञयागादि सब कर्म सनातन धर्मके अनुसार ही होते हैं। यहां भारतमें ही अनेकानेक सनातनी लाट साहबके भोज में जाते हैं और होटलों में ठहरते हैं पर वे सनातन धर्मी ही हैं। जो शास्त्र व्यवसायी इधर अछूतोद्धारका विरोध करते हैं वे अथवा उनके भाई इन राजा महाराजोंके यहां कर्मकाण्ड कराते हैं और दक्षिणा लेते हैं। बीकानेरके महाराज, पटियाले के महाराज, बड़ौदाके महाराज, तथा अन्य कितने ही महाराज न मालूम कितनी दफा विलायतयात्रा कर आये हैं पर उन्हें जातिच्युत करनेका साहस किसी सनातनधर्म संघ वा महामण्डलको नहीं होता!

यह अवस्था देखकर ही चित्तको निश्चय होता है कि "सनातन" धर्मकी सख्तियां सिर्फ दुर्बलोंके लिये हैं-शास्त्रव्यवसायियोंका व्यवसायभी तो बना रहना चाहिये। बात यह है कि आजकल प्रकृत दुराचरणकी उपेक्षा तो सर्वत्रकी जाती है, सनातनधर्म तो अपने मतलबके लिये बदनाम किया जाता है। हिन्दू शास्त्र कामधेनु है, उससे जो माँगिये वही मिलता है। म्लेच्छोंके सामने सिर झुकाने की सलाह भी सनातनधर्म देता है और महात्मा गांधी जैसे शुद्ध आचारके साधु पुरुष को पतित ठहरानेका व्यवस्था भी सनातन धर्म उसी मुंह से देता है। पंचम जब तक हिन्दू है तब तक अछूत है और

जहां अहिन्दू हो गया वहां शुद्ध ही नहीं—यदि बड़े पदपर हो तो नमस्करणीय भी हो जाता है। यह व्यवस्था देने वाले हिन्दू धर्म के—सनातन धर्म के—रक्षक हैं तथा हिन्दू पंचम को देवदर्शन की अनुमति देने वाले उस धर्म के विनाशक हैं! अभागिन वाल विधवाओं को पुनर्विवाह से वंचित रख कर उन्हें कुकर्म करने के लिये वाध्य करना, तथा भ्रूणहत्या को अप्रत्यक्ष रूप से उत्तेजन देना भी सनातन धर्म की रक्षा का एक साधन समझा जाता है। शास्त्रोंकी दशा तो यह हो गयी है कि जो वचन अपने मतलब के मिलें उनको तो स्वीकार किया और जो पसन्द न आये उनके सम्बन्ध में कह दिया कि वे अन्य युगके लिये थे! अन्य युगकी इस युक्ति से शास्त्रव्यवसायियों के बड़े बड़े काम निकल आते हैं।

सारांश यह कि बुद्धि को ताकपर रखकर काम करते जाइये। शास्त्रवचनों में भी उनका ही आदर कीजिये जो प्रचलित प्रथा का समर्थन करते हैं। यही भारत के अधःपातका मुख्य कारण हुआ है। ईश्वर की कृपा से समय बदल गया है और शिक्षित सज्जन इस पर विचार करने लग गये हैं। हमारी अपील उनसे ही है। भारत का भविष्य उन पर निर्भर है। आप स्वयम् शास्त्रों का अध्ययन कीजिये और अवस्था पर दृष्टि डालिये। ऋषिवाक्य आदरणीय अवश्य हैं, पर स्मरण रखिये कि पुराणों और स्मृतियों में स्वार्थियों ने अपने अपने विचार भी घुसेड़ दिये हैं। भूसे से गेहूं अलग करने की आवश्यकता है। देशकालानुसार व्यवस्था देना प्राचीन रीति है। पुरानी व्यवस्थायें भी इसी दृष्टि से दी गयी थीं। आज भी देश और समाज के हित का विचार कर आचार विचार

की व्यवस्था देनी चाहिये। अन्धों के पीछे अन्धे की तरह चलने से एक दिन मृत्यु के खन्दक में गिरना पड़ेगा। एक हजार वर्ष में भारत का तीसरा हिस्सा अहिन्दू हो गया है, हिन्दुओंकी संख्या अन्य धर्मियों की तुलना में घटती चली जा रही है, हिन्दू पौरुषहीन और अकर्मण्य हो गये हैं। यही अवस्था बनी रही तो ऋषियों का नाम लेवा और पानी देवा भी कोई न रह जायगा। धर्मके नाम जो क्रूरतायें समाज में हो रही हैं उनका समर्थन दयासागर और लोकोपकारपरायण ऋषियों ने कभी नहीं किया था, इस बातपर दृढ़ विश्वास रखिये। भारत को और उसकी प्राचीन सभ्यता को यदि आप बचाना चाहते हों तो ईश्वरदत्त बुद्धि से काम लीजिये, क्योंकि यही मनुष्य की सब से बड़ी सम्पत्ति है और यही मनुष्य को मनुष्य बनती है।

हिन्दुओं की उक्त सामाजिक त्रुटियों और अनेक दोषों के होते हुये मुसलमानों को शुद्धि का राग अलापना कितना भयानक और आपत्तिजनक है। मुसलमानों की शुद्धि की अपेक्षा पहले सुधारकों को चाहिये कि हिन्दू जाति का शुद्धि के लिये प्रयत्न करें। हिन्दुओं के अन्दर सामाजिक तथा धार्मिक अनेक कुरीतियाँ ऐसी भरी पड़ी हैं जिनकी सफाई बिना हिन्दुओं को शुद्धि करने और शुद्ध हुये लोगों को अपने में पचाने की शक्ति ही न आवेगी।

क्या मुसलमान हिन्दू हो सकता है?

यदि हम लोग स्वयँ शुद्ध हो जावें तो मुसलमान हुये हिन्दुओं को शुद्ध करके अपने में मिलाना एक साधारण सी

बात हो जावेगी। परन्तु आडम्बर के पूर्ण भक्त हमारे अनेक सनातनी हिन्दू कहा करते हैं कि हिन्दू से मुसलमान तो हो सकता है परन्तु मुसलमान से हिन्दू नहीं बन सकता। इसी महान् भूलके कारण हिन्दुओं का वर्णनातीत ह्रास हुआ है। प्रायः लोग कहा करते हैं कि क्या गदहा कभी घोड़ा हो सकता है? बीरबल ने भी अकबर को ऐसे मूर्खतापूर्ण उत्तर से हिन्दू नहीं बनाया। अकबर ने एक बार हिन्दू बनने की इच्छा प्रकट की तो बीरवल एक गदहे को नदी में ले जाकर साबुन से खूब मलने लगे। जब बाद् शाह ने पूछा कि बीरवल! यह क्या कर रहे हो, तो बीरबल ने उत्तर दिया कि हुज़ूर, मैं इसे घोड़ा बना रहा हूं। बादशाह के यह कहने पर कि गदहा घोड़ा नहीं बन सकता, बीरबल ने कहा कि यदि गदहा घोड़ा नहीं हो सकता तो मुसलमान कैसे हिन्दू हो सकता है? इस बेवकूफी के उत्तर से हिन्दू सभ्यताका कितना नाश हुआ यह सब पर प्रकट है। यदि बीरबल उसे हिन्दू बना लिये होते तो क्या आज हिन्दुओं को पद पद पर ठोकरें खानी पड़तीं? इन्हें इतना भी समझ नहीं कि यदि गदहा घोड़ा नहीं बन सकता तो क्या घोड़ा गदहा बन सकता है? यदि मुसलमान हिन्दू नहीं बन सकता तो हिन्दू कैसे मुसलमान बन सकता है? इसके सिवाय घोड़ा और गदहा भिन्न २ जाति हैं परन्तु हिन्दू और मुसलमान दोनों एक मनुष्य जाति है। मत भेद होने से दोनों दो कृत्रिम जातियां बन गई हैं किन्तु वास्तव में एक हैं। जब तक मैं शास्त्रों वेदों पुराणों देवी देवताओं को मानता हूं हिन्दू हूं, पर ज्योंही उक्त विश्वास को तिलांजुलि देकर मुहम्मदी विश्वा

स का कायल हो गया, कुरान मानने लगा, कुर्बानी करने लगा, सुन्नत कराने लगा, मुसलमान हो गया। सिवाय विचारों के परिवर्तन के और क्या परिवर्तन होता है? शरीर तो मुसलमान या हिन्दू नहीं किन्तु विचारों के संस्कार से हिन्दू या मुसलमान कहलाता है। ऐसी दशा में जब एक हिन्दू मुसलमान हो जाता है तो क्या कारण है कि मुसलमान हिन्दू नहीं बन सकता?

ऊपर के अनेक उदाहरणों से पता चल गया होगा कि रूढ़ि की गुलामी के कारण तत्कालीन पण्डितों ने बड़ी भूलें की, जिसका परिणाम हम सब लोगों को भोगना पड़ रहा है। अकबर हिन्दू होना चाहता था यदि उसी समय उसे हिन्दू बना लिये होते तो आज कोरान का नाम ही न रहता, फिर कुर्बानी का झगड़ा ही आज क्यों मचता? उसके विचार एक दम पलट गये थे, रक्षाबन्धन के अवसर पर अकबर ब्राह्मणों द्वारा अपने हाथ में राखी बँधवाता था। वह चन्दन लगाता था। सूर्यसहस्रनाम का पाठ करता था। वह तिलक और जनेऊ भी धारण करता था। हिन्दूधर्म पर उसकी पूर्ण श्रद्धा थी। दशहरा होली दीवाली आदि त्यौहार बादशाह की तरफ से भी मनाये जाते थे। वह हिन्दू धर्म में दीक्षित होना चाहता था परन्तु उस समय के पण्डितों की भूल से सब काम बिगड़ गया। बुद्धिमान वही है जो पूर्व के भूलों से पाठ सीखे। करोड़ों मलकाने राजपूत अभी ऐसे हैं जो मुसलमानों से कुछ भी सम्बन्ध नहीं रखते। वे हिन्दू धर्म में पुनः आना चाहते हैं परन्तु हिन्दुओं की इसी कम-जोरी के कारण वे अलग हैं। यदि अब हिन्दुओं ने होश न

संभाला तो वे अब न बचेंगे। उनके लिये धर्म का द्वार एक दम बन्द कर रखा है। वह जाति या धर्म टिक ही नही सकता जिसमें से लोग प्रति दिन निकलते ही जाते हों।

* अछूतों के साथ दुर्व्यवहार *

हिन्दुओं की कुल सँख्या २२ करोड़ है जिसमें ७ करोड़ ऐसे लोग हैं जो वर्णाश्रमधर्म से बाहर अछूत कहे जाते हैं। उनके साथ पशुओं से भी बदतर व्यवहार होता है। प्रतिदिन उनके साथ सामाजिक अत्याचार हो रहा है। वे अब समझ गये हैं। यदि अब भी उनके साथ सद्व्यवहार न होगा तो वे सब ईसाई और मुसलमान हो जावेंगे। तब तो हिन्दू १५ करोड़ ही रह जावेंगे और इस भूलका जो दुष्परिणाम भोगना पड़ेगा उसे सोचकर शरीर रोमांचित हो जाता है। हमारी भलाई इसी में हैं, कि इन अछूत जातियों को भी कम से कम वे ही अधिकार देकर अपने बराबर कर लेना चाहिये, जो जो अधिकार मुसलमानों को दिये गये हैं। यह कितना भारी अन्याय है कि मुसलमान कूयें में पानी भरे, मन्दिरों में जाकर नाचे परन्तु एक चर्मकार न तो कूप में पानी भर सकता है और न ठाकुर के मन्दिर में साफ सुथरा होकर दर्शन करने जा सकता है। कहा जाता है कि इससे मन्दिर नापाक हो जावेगा। पर इससे बढ़ कर मूर्खता की और कौन सी बात हो सकती है? मुसलमान मन्दिर में जावे, रण्डी नाचे तो मन्दिर नापाक न हो, परन्तु एक चोटीवाला वहां चला जाय तो मन्दिर

नापाक ! वलिहारी है ऐसी बुद्धि पर !! जिस ठाकुर का चरणामृत अकालमृत्यु का हरण करने वाला बतलाया जाता है; जो ठाकुर पापी से पापी को तार देने वाला है, चमार भंगी के प्रवेशसे वही नापाक !! कैसी जहालत !! कैसा धर्म !! अनेक कारणों में एक यह भी कारण है जिससे अछूत कहलाने वाले हमारे भाई दिनों दिन हमसे अलग होते जाते हैं। इस लिये यदि हम चाहते हैं कि हमारा पैर न कटे और हिन्दू धर्म बना रहे, तो हिन्दू मात्र को विशेष करके उच्च वर्णों को देश काल के अनुसार अपने रस्मो रेवाज में परिवर्तन करके इनके साथ मनुष्य का सा व्यवहार करना चाहिये और मुसलमानों इतना हक इन्हें भी दे देना चाहिये। ऐसा न करना ऊँचे हिन्दुओं की संकीर्णता और अछूत को विधर्मी बनने के लिये उत्तेजन देना है, यह एक स्पष्ट सत्य है, इसके लिये अधिक वाद विवाद का आवश्यकता नहीं है, परन्तु आजकल के शास्त्रव्यवसायी लोग इसे सनातन धर्म के विरुद्ध बतलाकर रौला, मचाते हैं अतःशास्त्रों की आज्ञाओंका विवेचन यहां पर कर देना कुछ अप्रासंगिक न होगा। हमें यहां दिखला देना है कि शास्त्र की दोहाई देनेवाले और वर्णों के गुरु बनने वाले आज कल के ब्राह्मण क्या सत्यतः ब्राह्मण धर्म को मानते हैं ? क्या शास्त्र के अनुसार चलते हैं अथवा दूसरों को उपदेश देने के लिये सम्पूर्ण शास्त्र बने हैं ?

ब्राह्मण लोग स्वयं शास्त्र नहीं मानते।

आज कल ब्राह्मण लोग मत्स्य मांस के कितने भक्त हैं ? इसे प्रायः सब लोग जानते हैं। बङ्गाली कन्नौजिया सरवरिया

सरजू पारी शाकद्वीपी आदि ब्राह्मण माँस के इतने भक्त हैं कि देवी देवताओं के सामने काटते हैं और प्रतिदिन मार मार खाते हैं, पर शास्त्रदृष्टि से ये लोग पतित और शूद्र हो गये हैं। पातालखण्ड अध्याय ११० पद्म पुराण में एक ब्राह्मण की कथा है जो मांसादि खाने, जूवा खेलने शराब पीने से शूद्र बन गया और राजा ने उसको ब्राह्मणत्व से पतित कर दिया—

> अभक्षि मांसं चापायि सुराचाभाषि दुर्वचः ।
> परयोषातथागामि परस्वं प्रत्यहारिच ॥
> अक्रीडि द्यूतमखिकृत् कलंजं चादि दुर्भुजः ।
> नापूजि जगतामीशः शिवोवा विष्णुरेववा ॥
> एवं कालेन दुर्वृत्तं राजावाक्यमभाषत ।
> विप्र विप्रत्वमुत्सृज्य शूद्रत्वं प्राप्तवानसि ।
> तस्मान्नियोगधर्मेण भवन्तं भ्रंशयामिच ॥

भावार्थ—वह ब्राह्मण मांस खाता था, शराब पीता था कटुवचन बोलता था, परस्त्री गमन करता था, दूसरे का धन हरण करता था, जूवा खेलता था, अभक्ष्य कलंजादि खाता था, तब राजा ने इस दुर्वृत्त के कारण उसे ब्राह्मण से पतित करके शूद्र बना दिया। यदि पुराण का यह वचन सत्य है तो आजकल के मांसादि खाने वाले ब्राह्मण क्या पतित नहीं हैं? यदि कोई राजा नियामक होता तो क्या ये ब्राह्मण बने रहते और ब्राह्मणेतरों पर झूठा रोब जमाते?

इस विषय में अत्रि महाराज अपनी संहिता में क्या कहते हैं आपलोग उस पर ध्यान दें।

चौरश्च तस्करश्चैव सूचको दंशकस्तथा ।
मत्स्यमांसे सदा लुब्धो विप्रो निषाद उच्यते ॥३८०॥

चोर डाकू चुगुलखोर मछली खाने के लिये सदैव उत्सुक ब्राह्मण निषाद कहलाते हैं । क्या उक्त प्रमाण से बंगाली उड़िया तथा एतद्देशीय सरवरिया आदि मत्स्य-भोजी ब्राह्मण निषाद कहलाते हैं ? शास्त्र की दोहाई देने वालों को इसकी व्यवस्था छपवा कर जनता में बँटवा देनी चाहिये । आगे और देखिये ।

कृषिकर्मरतोयश्च गवांच प्रतिपालकः ।
वाणिज्यव्यवसायश्च स विप्रो वैश्य उच्यते ॥३७८॥
लाक्षालवणसंमिश्रं कुसुम्भं क्षीर सर्पिषः ।
विक्रेता मधुमांसानां स विप्रो शूद्र उच्यते ॥३७०॥
क्रियाहीनश्च मूर्खश्च सर्वधर्मविवर्जितः
निर्दयः सर्व भूतेषु विप्रः चाण्डाल उच्यते ॥३८३॥

अर्थ—जो खेती के काम में लगा हो, गौवों का पालन करता हो अर्थात् उसी से जीविका करता हो, व्यापारादि करता हो वह ब्राह्मण वैश्य कह लाता है ॥ ३७८ ॥ ब्राह्मण लोग उक्त शास्त्र वचन से उक्त प्रकार के ब्राह्मण कहलाने वालों को वैश्य का फतवा क्यों नहीं देते ?

अर्थ—जो लाख नीमक केसर दूध घी मधु मांस को बेचते हैं वे ब्राह्मण शूद्र कहे जाते हैं। आज कल ब्राह्मणों में हजारों, नहीं नहीं, लाखों पाये जावेंगे जो उक्त चीज़ों को बेचकर अपनी जीविका चलाते हैं, और मांस बेचना तो दूर, मांस भोजी हैं । इनके लिये ब्राह्मण सभा क्यों नहीं घोषणा करती ॥ ३७९ ॥

स्वकं कर्म परित्यज्य यदन्यत्कुरुते द्विजः ।
अज्ञानादथवा लोभात्सतेन पतितो भवेत् ॥२-३॥

अपने २ कर्मको छोड़कर जो द्विज दूसरा कर्म अज्ञान वश अथवा लोभवश करता है वह उस कामसे पतित हो जाता है । बतलाइये आज कितने ब्राह्मण या क्षत्रिय हैं जो अपने २ कर्म पर आरूढ हैं ? आज ब्राह्मणों ने अपना कर्म छोड़कर वैश्यों तथा शूद्रों का काम ग्रहण कर लिया है । इनके साथ यह शास्त्रीय व्यवस्था क्यों नहीं लगाई जाती ? क्या कभी इन शुद्ध सनातनियोंने इसके विरुद्ध अन्दोलन किया है ? रुपये में १५ आना द्विज आज उक्त प्रमाण से पतित हैं । अछूतोद्धार के विरुद्ध शास्त्रकी दोहाई देनेवालों ने क्या कभी ऐसे ब्राह्मणों के विरुद्ध आवाज़ उठाई है । आवाज़ उठाना तो दूर रहे, इन्हीं लोगों के साथ खान पान बेटी व्यवहार करते हैं ।

यो न संध्यामुपासीद्द ब्राह्मणोहि विशेषतः ।
सजीवन्नेव शूद्रस्तु मृतःश्वाचैव जायते॥द०२-२६
सन्ध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्वकर्मसु
यदन्यत्कुरुते कर्म न तस्य फलभाग्भवेत् ॥२७॥

जो ब्राह्मण सन्ध्या न करे वह शूद्र है मरने के बाद कुत्ते का जन्म पाता है । संध्याहीन नित्य अशुद्ध है । सब कर्मो के लिये अयोग्य है ।—इस प्रमाण से तो देहातों में रुपया में पौने सोलह आना पतित हैं ! इन्हें विवाह श्राद्धादि शुभ कर्मों में क्यों मना नहीं किया जाता ?

न तिष्ठतितुयःपूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम् ।
सशूद्रवद्बहिष्कार्यःसर्वस्माद्द्विजकर्मणः । मनु २-१०

जो सायं प्रातः सन्ध्या न करे उसे सब द्विजकर्मों से शूद्र के समान निकाल देना चाहिये।

आज रुपये में पौने सोलह आना सन्ध्या करना तो दूर रहे, जानते भी नहीं, फिर इनके लिये शास्त्र व्यवस्था क्यों नहीं ?

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वंगनागमः।
महान्ति पातकान्याहुस्संसर्गश्चापितैःसह ॥मनु॥

ब्रह्म हत्या करना, शराब पीना, चोरी करना गुरुपत्नी गमन करना और इन पापियों के साथ संसर्ग रखना ये पांचो महा पातकी कहे जाते हैं। अब आप लोग विचारिये, क्या कोई पतित होने से बचा है ? आज शराबियों और चोरों की कितनी वृद्धि है और इनके साथ सबही लोग व्यवहार करते हैं फिर ये शुद्धि में टांग अड़ाने वाले और अन्त्यजों के लिये शास्त्र की दोहाई देने वाले शुद्ध सनातनी भाई पतित होने से बचे हैं ?

सिन्धु सौवीर सौराष्ट्रं तथा प्रत्यन्तवासिनः।
कलिंगकौकणान्वंगान् गत्वा संस्कारमर्हति ॥

सिन्ध सौवीर सौराष्ट्र सीमाप्रदेश कलिंग कोकण बङ्गाल में यदि जाय तो फिर संस्कार के योग्य हो जाता है। क्या इसपर अमल किया जाता है ? भला तत्तद्देशीय द्विजों की क्या हालत होगी ? वहाँ ब्राह्मण कहाँ से आ गये ? यदि यहाँ से जाकर वहाँ बसे तो भी पतित, ब्राह्मण रहे कहाँ ?

अश्रोत्रिया अननुवाक्या अनग्नयो वा शूद्रधर्माणो भवन्ति। वसिष्ठस्मृति।

योनधीत्य द्विजो वेद मन्यत्र कुरुते श्रमम्।

सजीवन्नेन शूद्रत्वमाशुगच्छति सान्वयः॥
नानृग्ब्राह्मणोभवति नवणिङ् नकुशीलवः ।
न शूद्रप्रेषणं कुर्वन् न स्तेनो न चिकित्सकः॥

अश्रोत्रिय (वेद न जानने वाले) अग्नि होत्रादि न करने वाले, अननुवाक्या अर्थात् अनुवाक (वेद के मन्त्रो का समूह विशेष) न जानने वाले शूद्र धर्मी होते हैं। अर्थात् जो धर्म शूद्र का वही इनका है। ये वे ही कर्म करें जो शूद्र करते हैं। जो द्विज वेद न पढ़कर अन्यत्र श्रम करता है, वह जाते जी अपने वंश के साथ शूद्र हो जाता है। जो वेद नहीं जानता वह ब्राह्मण नहीं होता, जो बनिया का काम करता है वह ब्राह्मण नहीं, जो कुशीलवका काम करता है या पठवनियां का काम करता है या जो चोर वा चिकित्सक है वह ब्राह्मण नहीं है। क्या इन प्रमाणों के आधार पर ब्राह्मण वर्ण को व्यवस्था दी जाती है! कितने ब्राह्मण वेद पढ़ते हैं? वाणिज्यादि करने वालोंको क्यों व्यवस्था नहीं दी जातीकि तुम लोग ब्राह्मण नहीं ?

आज कल अंग्रेज़ी फारसी आदि भाषा सब द्विजवर्णी पढ़ते हैं तो क्या वे शास्त्र की बात मानते हैं? उन्हें तो वसिष्ठस्मृति कहती है "नम्लेच्छभाषां शिक्षेत" म्लेच्छ भाषा न पढे॥ आज कल शास्त्रके विरुद्ध ये शुद्ध सनातनी क्यों आचारण करते हैं? क्यों सनातनियों को अंग्रेज़ी पढ़ने से मना नहीं करते?

गोरक्षकान् वाणिजकान् तथा कारु कुशीलवान्
प्रेष्यान् वार्धुषिकान् चैव विप्रान् शूद्रवदाचरेत्॥५९॥
बौधायनस्मृति प्र० १ अ० ५

जो विप्र गोपाल हो, जो बनियां हो, जो कारीगरी करता हो या नाच तमाशा करता हो, जो पठवनियां का काम करता हो, जो सूद लेता हो, उसके साथ शूद्र के समान व्यवहार करना चाहिये। तथा और भी देखिये द्वि० प्र० अ० ४

सायं प्रातःसदा सन्ध्यां ये विप्रा नो ह्युपासते।
कामं तं धार्मिको राजा शूद्रकर्मसुयोजयेत् ॥ २० ॥

जो विप्र सायं प्रातः सन्ध्या न करे, ऐसे को शूद्र के काम में धार्मिक राजा लगावे। अर्थात् उनसे शूद्र का काम लें। बतलाइये शास्त्रकी उक्त आज्ञा का पालन होता है? यदि नहीं तो शुद्धि के विरोधी पण्डित क्यों चुप हैं।

सन्यसेत्सर्व कर्माणि वेदमेकं न सन्यसेत्।
वेदसन्यसनाच्छूद्रः तस्माद्वेदं न सन्यसेत् ॥

सन्यासी सब कर्म छोड़ दे परन्तु वेद न छोड़े क्योंकि वेद छोड़ने से शूद्र हो जाता है। आज कितने साधु सन्यासी वेद जानते हैं? क्या, सब शूद्र नहीं है? क्या इनके लिये व्यवस्था दी जाती है? अंगिरसस्मृति में लिखा है।

यस्तु भुंजीत शूद्रान्नं मासमेकं निरन्तरम्।
सजावन्नेव शूद्रःस्यान्मृतःश्वानोभिजायते॥६७॥
शूद्रान्नेनतु भुक्तेन मैथुनं यो ऽधिगच्छति।
यस्यान्नं तस्यते पुत्राः अन्नाच्छुक्रं प्रवर्तते॥६६॥
शूद्रान्नं शूद्रसम्पर्कः शूद्रेणव सहासनम्।
शूद्राज्ज्ञानागमः कश्चिज्ज्वलन्तमपिपातयेत् ॥७१॥

शूद्रान्नेनोदरस्थेन यस्तु प्राणान् विमुञ्चति
सभवे त्सूकरो ग्रामे तस्यवा जायते कुले ॥७०॥
शूद्रान्न रसपुष्टस्य त्वधीयानस्य नित्यशः
यजतो जुह्वतोवापि गतिरूर्ध्वंन विद्यते ॥ ६८ ॥

जो शूद्र का अन्न निरन्तर एक मास खावे, वह जीता हुआ शूद्र हो जाता है और मरने पर कुत्ते की योनि में जन्म लेता है। शूद्रान्न खाकर जो मैथुन करता है और उसवीर्य से जो सन्तान होती है वह उसी शूद्र की कही जाती है जिसका अन्न उसने खाया है। शूद्रान्न खाने से बड़े से बड़ा तेजस्वी भी पतित हो जाता है। यदि शूद्रान्न पेट में रहे और ब्राह्मण मर जावे वह मरने के बाद सूकरकी योनि में जन्म लेता है या उसी कुल में उत्पन्न होता है।

आजकल के सनातनी पण्डित लोग वर्तमान ब्राह्मण क्षत्रिय अग्रवाल खत्री महेश्वरी आदि को छोड़कर प्रायः सब जातियों को शूद्र कहते हैं और उन्हीं के यहाँ इनकी निरन्तर जीविका है अब पण्डित लोग बतलावें कि यदि उक्त कथन सत्य है तो रुपये में पन्द्रह आना ब्राह्मण शूद्र वंश होंगे यानहीं? दूसरों पर व्यवस्था देने के पहले पण्डितों को अपनी ओर एक बार अवश्य दृष्टि डालनी चाहिये।

बौधायन प्रथम प्रश्न अध्याय एक में लिखते हैं:-

अवन्तयो गमगधाः सुराष्ट्रा दक्षिणापथाः।
उपावृत्सिन्धु सौवीरा एते संकरयोनयः ॥३१॥

आरट्टान् कारस्कान् पुण्ड्रान् सौवीरान् वंग कलिंगान् प्रानूनानिति चगत्वा पुनस्तोमेन यजेत सर्व पृष्ठयावा ॥ ३२ ॥

अवन्ति, सिन्धु, सौवीर अंग मगध सुराष्ट्र, दक्षिणपथ के रहने वाले संकरयोनि अर्थात् वर्ण संकर हैं। आरट्ट (पंजाब के उत्तर पश्चिम के देश) कारस्क पुण्ड्र सौवीर बङ्गाल, कलिंग आदि देशों में जाकर यदि लौटे तो पुनस्तोम अथवा सर्वपृष्ठा यज्ञ करे यही नहीं पुनः संस्कार करे।

अब देखिये बौधायन ऋषि उसी स्थान पर क्या कहते हैं।

> पद्भ्यां संकुरुते पापं यः कलिंगान्प्रपद्यते।
> ऋषयो निष्कृतिं तस्य प्राहुर्वैश्वानरं हविः ३४

जो कलिंग देश में चलकर जाता है वह पाप करता है। वहां कभी न जाना चाहिये। ऋषियों ने वहां जाने वाले के लिये वैश्वानर हवि का प्रायश्चित्त लिखा है। परन्तु आजकल लोग कलिंग में तीर्थ करने जाते हैं।

कलिंग कौन देश है इसपर तंत्रशास्त्र बतलाता है।

> जगन्नाथात्समारभ्य कृष्णातीरान्तगः प्रिये।
> कलिंगदेशः संप्रोक्तो वाममार्गपरायणः ॥‡

जगन्नाथ से लेकर कृष्णानदी किनारे तक का देश कलिंग देश है।

जिस कलिंग में जाना एक शास्त्र में वर्ज्य है, आज वहां पर लोग तीर्थ के लिये जाते हैं। और जूंठा भात आदि खाते

---

‡ वाममार्ग का पूरा विवरण जानना हो तो सत्यार्थप्रकाश ११ वां समुल्लास पढ़िये। उसको पढ़ने से इस मार्ग का पूरा हाल आप जान जाइयेगा।

हैं। देखिये जगन्नाथ तीर्थ में जाना शास्त्र विरुद्ध हुआ या नहीं ? जब उस देश में जाना निषिद्ध है, पाप है, तो फिर वहां के रहने वाले कैसे पतित न होंगे ? क्या पण्डित लोग ऐसी व्यवस्था देने को तैयार हैं ?

आजकल पण्डित लोग सब काम शास्त्र विरुद्ध कर रहे हैं। आज बुड्ढों की शादी धर्मानुकूल समझते हैं, पर पुराणों के आधार पर ये सब ब्रह्म हत्यारे हैं:-यथा देवी भागवत अध्याय १८स्कन्ध ६ तथा ब्र० वै० प्र० खं० अध्याय ॥ १६ ॥

वराय गुणहीनाय वृद्धायाऽज्ञानिने तथा ।
दरिद्रायच मूर्खाय रोगिणे कुत्सनायच ॥ ८२ ॥
अत्यंत कोप युक्ताय चात्यन्त दुर्मुखाय च ।
पंगवे चांगहीनाय चान्धाय बधिराय च ॥८३॥
जडाय चैव मूकाय क्लीबतुल्याय पापिने ।
ब्रह्महत्या लभेत्सोऽपि स्वकन्यां प्रददातिय ॥ ८४ ॥

गुणहीन, वृद्ध, अज्ञानी, दरिद्र, मूर्ख, रोगी, निन्दित, अत्यन्त क्रोधी, बदसूरत, पंगुल, अंगहीन, बहिरा, अन्धा, जड़, गूंगा, नपुंसक इत्यादि वरों को कन्या देने वालेको ब्रह्म-हत्या का पाप लगता है। क्या इसके अनुसार कन्यादान का विचार किया जाता है ? फिर क्यों शास्त्र की दोहाई दी जाती है।

आज कल ब्राह्मण और बनियों में कन्या बेचने की प्रथा ज़ोरों से प्रचलित है परन्तु इनके पतित पना की डुग्गी नहीं पीटी जाती, न तो शास्त्र की व्यवस्था दी जाती है। देवी भागवत में वहीं पर आगे लिखा है:—

शान्ताय गुणिने चैव यूनेच विदुषे पिच ।
साधवे च सुतां दत्त्वा दशयज्ञफलं लभेत् ॥८५॥
यःकन्यापालनं कृत्वा करोति यदि विक्रयम् ।
विक्रेताधनलोभेन कुंभीपाकं स गच्छति ॥८६॥
कन्या मूत्रं पुरीषं च तत्र भक्षति पातकी ।
कृमिभिर्दंशितैः काकैःर्यावदिन्द्रांश्चतुर्दश ॥८७॥

शान्त गुणी जवान विद्वान् सज्जन वरको कन्या देनी चाहिये जो कन्याका पालन करके बेचता है वह कुंभीपाक नरक में जाता है और वहां कन्या के मूत्रादि को खाता है। जवान को कन्या न देकर आजकल छोटे बच्चे के गले पण्डितों द्वारा कन्यायें मढ़दी जाती हैं। कन्या विक्रय प्रसिद्ध हो है फिर पण्डित मंडल शास्त्र के विरुद्ध क्यों करता है! अस्तु,

इन उक्त प्रमाणों के देने का मेरा अभिप्राय केवल यही है कि जो लोग शास्त्र की व्यवस्था स्वयं नहीं मान रहे हैं उन्हें उन्ही शास्त्रों पुराणों की व्यवस्था अन्यों से मनवाने का क्या अधिकार है?

इसलिये व्यर्थ सनातन सनातन चिल्लाकर जनता को धोखे में डालना अच्छा नहीं है। जब शास्त्रकी व्यवस्था अपने ऊपर से हटादी है तो इन अन्त्यजों पर वही पुरानी व्यवस्था क्यों लादी जाती है? क्या यह सरासर अन्याय नहीं है? देश काल के अनुसार हमें धार्मिक विषयों में परिवर्तन करना चाहिये। जब सरकार ही कानून बनाकर कानून को न माने तो जनता को मनाने के लिये कैसे वाध्य कर सकती है? जब शास्त्रों का ठीका आपको दिया गया तो यदि आपही उसकी

बात न मानेंगे तो कौन मूर्ख होगा जो उसे मानेगा ? इसलिये बुद्धिमानी यही है कि अपने नियम में परिवर्तन करके अन्त्यजों को उठाओ और उन्हें भी कम से कम उतनाही हक़ दे दो जितना हक़ मुसलमानों को दिया है इसी में हिन्दू जातको भलाई है।

मनुस्मृति कहती है कि शूद्र राजाके राज्य में नहीं रहना चाहिये, पर आज म्लेच्छ राज्य में लोग रहते हैं। राज्य का मान, उपाधि ग्रहण करते हैं,। राज्य के द्रव्य से अपना उदर पालते हैं क्या यह उचित है ? इन लकीर के फ़कीर सनातनियों को तो शास्त्र की बात मानकर इस देशको छोड़कर कहीं अन्यत्र जाकर बसना चाहिये पर स्वयं ऐसा नहीं करते।

जब शास्त्र के विरुद्ध ब्राह्मण क्षत्रिय सूद लेते हैं, यावनी भाषा पढ़ते हैं, मांस खाते हैं, शराब पीते हैं, वृद्ध विवाह बाल विवाह करते हैं, कन्या विक्रय करते हैं, वाणिज्य व्यवसाय करते हैं, सन्ध्या नहीं करते, पंच यज्ञ नहीं करते, अपने कर्म को छोड़कर दूसरे का कर्म करते हैं तब ये लोग कैसे कह सकते हैं कि हमलोग सनातन धर्म को मानते हैं। उक्त प्रमाणों से आप लोग स्वयं समझ गये होंगे कि आज कल शास्त्रों की बात तो कोई मानता नहीं परन्तु शास्त्रों की दोहाई ज़रूर देता है। इससे मानना पड़ेगा कि आज कल पूर्व काल-की सम्पूर्ण व्यवस्था चल नहीं सकती। जब शास्त्र के अनुसार चलते नहीं, तो उसकी दोहाई देने से क्या लाभ है ? अगत्या देश काल के अनुसार परिवर्तन करके हिन्दू समाज को जीवित रखने का प्रयत्न करना चाहिये। समाजिक धर्म में परिवर्तन

सनातन धर्म है। अनादि काल से परिवर्तन होता आया है। संसार ही परिवर्तन शील है तो शास्त्र क्यों न होंगे? मैं यहां पर शास्त्रों के प्रमाणों से ही दिखलाने की चेष्टा करूंगा कि धर्म शास्त्रों में समय समय पर देश काल के अनुसार परिवर्तन होता आया है और यही कारण है कि हिन्दू क़ौम अब तक जीती जागती चली आरही है। ३६ स्मृतियों का बनना इसका ज्वलन्त प्रमाण है।

अन्ये कृत युगे धर्मास्त्रेतायां द्वापरेऽपरे।
अन्ये कलियुगेन्हणां युगधर्मानुरूपतः॥ मनु

सत्ययुग में दूसरा धर्म, त्रेता में दूसरा धर्म, द्वापर में दूसरा धर्म और कलियुग में दूसरा धर्म होता है अर्थात् युग धर्म के अनुसार धर्म में परिवर्तन होता आया है। पूर्वकाल में क्षत्रिय लोग क्षत्रिय कन्याओं को भगा ले जाते थे और शादी करते थे इसे पूर्वकाल में धर्म समझते थे। कृष्णजी रुक्मिणी को अर्जुन सुभद्राको, भीष्म काशी राज की तीन कन्याओं को भगा ले गये थे और घर पर शादी की थी। ऐसेही क्षत्रियों में सैकड़ों उदाहरण हैं और यह प्रथा शास्त्रानुमोदित थी परन्तु आज यही अधर्म माना जाता है। पूर्वकाल में नियोगधर्म माना जाता था, महाभारत पुराण तथा स्मृतियों में इनके उदाहरण और प्रमाण भरे पड़े हैं परन्तु अब उसी को लोग बुरा और अधर्म समझते हैं। मनुके अनुसार औरस क्षेत्रज गूढ़ कानीन अपविद्ध पौनर्भव अवगूढ दत्तक आदि १२ प्रकार के लड़के दाय भागके और पिण्डदान के अधिकारी माने जातेथे परन्तु अब केवल औरस ही अधिकारी माना जाता है। गालव ने

ययाति से माधवी नामकी लड़की लेकर ३ जगह उसे बारी बारी से देकर दो दो सौ श्याम कर्ण घोड़े लिये और अन्त में चौथी बार विश्वा मित्र को वही लड़की दे दी और उससे विश्वामित्र ने भी एक सन्तान पैदा किया ! यह उस समय में धर्म था, पर आज भी कोई ऐसा करेगा ? देखो विराट पर्व अध्याय ११५ से ११६ अध्याय तक।

किसी समय मनुष्य समाज में व्यभिचार भी सनातन धर्म माना जाता था (देखो महाभारत अ० १०४ भीष्मका सत्यवती से धर्मकथन) परन्तु अब क्या उसे कोई धर्म मानेगा?

किसी समय गायके चमडे पर बैठ कर लोग यज्ञादि करते थे (देखो निरुक्त अ० २ खण्ड ५, अंशुं दुहन्तो इत्यादि मंत्र) परन्तु आज उसे अपवित्र मानते हैं। स्नान करके उसे छूते तक नहीं। सम्बर्तस्मृति में पातक की निवृत्ति के लिये दश गोचर्म दान की विधि है। दश तान्येव गोचर्मदत्त्वा स्वर्गे महीयते ॥ १८ ॥ बतलाइये देश काल के अनुसार धर्म में परिवर्तन हुआ या नहीं ? क्या १० गोचर्म दान को आज कल धर्म माना जाता है या पाप ? गोचर्म के दान लेने वाले ब्राह्मणही थे, चर्मकार नहीं।

व्यासने १२ जातियों को अन्त्यज मानाथा यथाः
चर्मकारो भटो भिल्लो रजकः पुष्करो नटः
वराटो मेद चाण्डालो दाशः स्वपचकोलिकः ॥

चमार, भट भिल्ल, धोबी, पुष्कर, नट वराट मेद चाण्डाल दाश स्वपच कौलिकः।

परन्तु समयके परिवर्तन से पीछे अत्रि अंगिरा यम आदि स्मृतिकारों ने इन सबको काटकरः—

रजकश्चर्मकारश्च नटो बरुड एवच ।

कैवर्त मेद भिल्लाश्च सप्तैते ऽन्त्यजाः स्मृताः ॥

केवल धोबी, चर्मकार नट बंसफोड़ मल्लाह मेद भिल्ल को अन्त्यज में रखा

रजकंचर्म कारंच नटं धीवर मेवच ।

बुरुडं च तथा स्पृष्ट्वा शुध्ये दाचमनाद्द्विजः ॥ १७ ॥

रजक चर्मकार नट मल्लाह, बंसफोडको अस्पृश्य माना है परन्तु आज कोई अस्पृश्य नहीं है। जरा देहातों में जाकर देखो, मल्लाह नट धोबी तो देहात क्या सर्वत्र ही स्पृश्य हैं परन्तु चर्मकारों को शहरों में अस्पृश्य मान रखा है वह भी इसलिये कि बेचारे कूड़ा उठाकर फेंकते हैं। यदि वे कूड़ाउठाना त्याग कर जूते ही बनाने लगजावें तो उनकी भी अस्पृश्यता नष्ट हो जावे। बांसफोड़ों को कोई नहीं छूता। बतलाइये नियम में जनता ने परिवर्तन कर डाला है न? मैं आडम्बरी गोपाल मन्दिर वालों का बात नहीं कहता, जो लकड़ी भी धो धोकर चूल्हा में लगाते हैं।

वर्धकी नापितो गोप आशापः कुम्भकारकः ।

वणिक्कि रात कायस्थो मालाकारः कुटुम्बिनः १०

एते चान्ये चबहवः शूद्रा भिन्नाः स्वकर्मभिः ॥ व्यास ११

बढ़ई नाई गोप आशाप कुम्हार, बनिया किरात कायस्थ माली कुटुम्बी ये तथा दूसरे बहुत से लोग कर्मो से शूद्र हैं।

परन्तु ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तण्ड में कायस्थों को क्षत्रियागर्भोत्पन्न लिखा है और शुद्रहोने का शाप दिया गया है। बनियां

अब वैश्य हैं जो द्विज वर्णान्तर्गत हैं। गोप अपने को क्षत्रिय कहते हैं और उनके पास अपने क्षत्रियत्व का पूरा प्रमाण है। परन्तु ब्रह्म वैवर्त अ० ६० में कृष्णजीने गोपों को वैश्य कहा है।

कुतस्त्वं गोकुले वैश्यो नन्दो वैश्याधिपोन्टपः ।
वसुदेव सुतोहंच मथुरायामहोकुतः ॥ ७४ ॥

नायी के लिये तो वेद मंत्र बोलने का अधिकार दिया गया यथाः—

आचान्तोदकाय गौरिति नापितस्त्री ब्रूयात ॥

गोभिल गृ-सू०प्र ४

निम्न लिखित वेद मंत्रों के आधार पर वे पहलेके ब्राह्मण सिद्ध होते हैं। व्यासका भी यही अभिप्राय है कि कर्म से ये शूद्र हैं।

आयमगन्त्सविता क्षुरेणोष्णेन वाय उदकेनेहि येना वपत् सविता क्षुरेण सोमस्य राज्ञो वरुणस्यविद्वान्। तेन ब्रह्माणो वपते दमस्य गोमानश्ववान् यमस्तु प्रजावान् (अथर्व ६-७-६८)

कहिये ये सब बातें सामयिक परिवर्तन बतला रही हैं या नहीं ?

जो जो बात जनता में नहीं निबह सकती, उस उस बातको लोग लाचार होकर मान लेते हैं। अभी हमारे देश में देहातों में आटा चालने के लिये गायके चमड़े की चलनी होती है उसमें का चला हुआ आटा सबही लोग खाते हैं। सींक के सूपमें तांत लगी रहती है परन्तु उसे लोग पवित्र ही मानते हैं, इसलिये कि बिना उसके काम नहीं चलता। गायके चमड़े और तांत को लोगों ने लाचार होकर शुद्ध मान लिया है, नहीं

तो क्यों सूप और चलनी से काम लेते ? इसी प्रकार पूर्वकाल में जिससे काम न चल सकता था स्मृतिकारों ने उसे धर्म मान लिया है और सदोष होते हुये भी उन्हें निर्दोष लिखा है। यथाः—

नित्यं शुद्धः कारुहस्तः पण्यं यच्च प्रसारितम्।
ब्रह्मचारिगतं भैक्षं नित्यं मेध्य मितिश्रुतिः॥

कारीगरों का हाथ नित्य शुद्ध है, बाजार में फैलाया हुआ सब सौदा नित्य शुद्ध है। ब्रह्मचारियों को दिया हुआ अन्न सब शुद्ध है। यदि अशुद्ध मान लेते जैसा कि प्रायः देखा जाता है तो फिर रोटी मिलना भी कठिन हो जाता।

तीर्थयात्रा विवाहेषु यज्ञ प्रकरणेषुच।
उत्सवेषुच सर्वेषु स्पृष्टास्पृष्टि र्न विद्यते॥

तीर्थ यात्रा विवाह यज्ञ, तथा सब उत्सवों पर छूवा छूत नहीं माना जाता। इसका कारण स्पष्ट है। यह बात निबह नहीं सकती, अतः निमय बना देना पड़ा। इन तमाम बातों के देखते हुये देशकाल के अनुसार पुराने नियमों को परिवर्तन करके नये नियम को बनाने से ही हिन्दू जातिका कल्याण हो सकता है। यदि कोई बलात्कार से इसे परिवर्तनन करना चाहेगा तो काल थप्पड़ मारकर स्वयं परिवर्तन कर देगा। पुराने शास्त्र ज्यों के त्यों पड़े रह जावेंगे और उसके मानने वालों को अंत में लाचार होकर काल प्रवाह के साथ चलना पड़ेगा।

शुद्धिका उद्देश्य।

अनेक सज्जन कह बैठते हैं कि शुद्धि संगठन के काम से हिन्दू और मुसलमानों में वैमनस्य फैल गया है परन्तु इससे

लाभ न कुछ हुआ न होने वाला है और इस व्यर्थ कार्यों के आरम्भ से देशकी राज नैतिक प्रगति को बड़ा धक्का पहुँचा है ।

मेरी समझ में ऐसा समझने और कहने वाले भ्रम में हैं। राजनैतिक प्रगतिको धक्का पहुँचना तथा परस्पर वमनस्य बढ़ना ये दोनों बातें ठीक हैं परन्तु इनका कारण शुद्धि संगठन नहीं किन्तु मुसलमानी सभ्यता और कुरान की शिक्षा है।

जब तक इनका धार्मिक काम (तबलीग़) विना रोक टोक के होता रहा तब तक ये चुप चाप अपना काम करते जाते थे इस प्रकार लाखों हिन्दुओं को प्रत्येकवर्ष पानी पिला पिलाकर मुसलमान बनाया करते थे। स्त्री, लड़की और लड़के भगा भगाकर उन्हें चुपचाप मुसलमान बना लेते थे। कहीं २ तो विना अपराध एक बहाना ढूंढकर हिन्दुओं पर आक्रमण कर बैठते थे और हज़ारों की चोटी काटकर मुसलमान बनालेते थे। कोहाट मलावार का हत्याकाण्ड इसका साक्षी है। जब हिन्दुओंने देखा कि अब चुप बैठने से आर्यसभ्यता भारत से भी नष्ट हो जायगी तो हिन्दू भी अपनी रक्षा करने के लिये उठ खड़े हुये। यह बात हमारे मुसलमान भाइयों को बहुत बुरी लगी। यदि इनका राज्य होता तो ये सर कटवा लते, क्योंकि इन के कुरानमें मुरतिद को जान से मार डालने की आज्ञा इनके दयालु ख़ुदा ने दिया है। जब हिन्दुओं के खड़े हो जाने से इनके स्वार्थ में बट्टा लगा तो इनमें वेही कुरानी सभ्यता के जंगली भाव जागृत हो उठे और मसजिदके सामने बाजाका प्रश्न लेकर हिन्दुओं के हर एक काम में टांग अड़ाने और झगड़ा फसाद करने लगे। हमें कोई मारे और हम अपना बचाव करें

तो क्या हम पर कोई अपराध लगा सकता है ? मुसलमानों के आत्याचार से पीडित होकर हिन्दुओं ने तुर्कीब तुर्की जवाब देना अंगीकार किया तो इस में शुद्धिका क्या अपराध है ? हमारे घर में से प्रतिदिन कोई चोरी करके माल उठाले जाय तो उस माल को पता लगाकर लेलेना क्या कोई अपराध है ? अपराधी तो चोर है। यदि कोई सज्जन यह कहें की शुद्धि करने का हक तो हिन्दुओं का है परन्तु बलात्कार से शुद्धि करना अच्छा नहीं, इसी से झगड़ा फसाद होता है। मैं कहता हूं कि यह अपराध भी हमपर नहीं लग सकता। यह अपराध भी मुसलमानों पर ही लागू होता है। क्या अब तक कोई एक प्रमाण भी देसकता है जहां हिन्दुओंने बलात्कार किसी की शुद्धि की हो। मुसलमानों का लड़का लड़की तथा, औरतों को फुसलाकर भगाना एक प्रसिद्ध बात है। ये बराबर छोटे छोटे बच्चों को चुराले जाते हैं, बलात्कार मुसलमान बना लेते हैं। जब हिन्दुओंको पता लगता है तो वे उन्हें छोड़ा कर फिर शुद्ध कर लेते हैं। किसी हिन्दूने किसी जन्म के नाबालिग मुसलमान को शुद्ध नहीं किया प्रत्युत मुसलमान सदा ऐसा कर रहे हैं। अतः यह इलज़ाम भी हमपर नहीं लग सकता।

दूधका जला छांछको फूंक फूंक कर पीता है। हम देखते हैं कि जहां २ मुसलमान अधिक हैं वहां वहां हिन्दुओं के नाकमें दम है। यह उनकी कुरानी शिक्षा का प्रभाव है। ऐसी दशामें क्या हमारा यह कर्तव्य नहीं है कि अब हमलोग इनकी संख्या वहां बढ़ने न दें जहां ये लोग कम हैं। यदि मुसलमानी सभ्यता बढ़ी तो हिन्दुओं को भारत में भी शरण न मिलेगा। अतः हेयं दुःखमनागतम्॥ आने वाले दुःख को दूर करने के

लिये दुःख आनेके पहले प्रयत्न करना-बुद्धिमानी है। मुसलमान हमारे दुश्मन नहीं किन्तु उनकी सभ्यता संसार की शान्ति के लिये भयावह है इसलिये ऐसी सभ्यता के नाश करने के लिये हिन्दुओं का प्रयत्न करना कुछ अनुचित नहीं है।

(२) मुसलमानी सभ्यता विज्ञान की शत्रु है। ये मुसलमान कुरान के आगे संसार के उत्तमोत्तम ज्ञानपूर्ण पुस्तकों को तुच्छ समझते हैं। यही कारण है कि उन्होंने वैज्ञानिक रत्नों से परिपूर्ण मिश्र भारत और फारस के बड़े बड़े पुस्तकालयों को जलवा डाला। इतिहासकार इब्ने खालिदूनने अपने मुकद्मा के आरम्भ में लिखा है कि खलीफा उमर ने पर्शिया की लायब्रेरी को भस्म करवा डाला। नालन्दा विश्वविद्यालय तथा बुद्ध गया में अपूर्व ग्रन्थों से सुसज्जित नवमंज़िले विशाल पुस्तकालय को बख्तियार ख़िलजी के सेनापति मोहम्मद बिन कासम ने सन१२१९में जलवा दिये। अलाउद्दीन खिलजीने अनहलवाड़ा नामक पाटन के प्रसिद्ध पुस्तकालय को जलवा डाला। अलेग्ज़ेन्ड्रिया की प्रसिद्ध लायब्रेरी जिसमें प्रायः संसार की समस्त पुस्तकोंका संग्रह था, जलवा दी गई। इन पुस्तकालयों को जलाकर मुसलमानों ने मनुष्य सभ्यता को लाखों वर्ष पीछे ढकेल दिया और उस समय तक आविष्कृत ज्ञानभण्डार का नाश करके कुरान की जंगली शिक्षा का परिचय दिया।

कुरानकी शिक्षा ऐसी गन्दी है कि जब तक दुनियां में कोरान रहेगा हिन्दुओं से ये कभी भी मेल न करेंगे। कुरान की आयतें उन्मत्त जाहिल मुसलमानों को खून करने के लिये उत्तेजित करती हैं। अर्थर गिल मैन साहब ने कुछ आयतों का हवाला दिया है वे आयतें ये हैं:—

(१) ख़ुदाको राहमें लड़ो और काफिरों को जहां कहीं देखो मार डालो।

(२) जब तुम काफ़िरों से मिलो उनका सिर उड़ा दो यहां तक कि तुम सबका नाश करदो या रस्से बांध कर कैद करलो जो मुसलमान खुदा की राहमें लड़कर मारे जाते हैं उनका काम निष्फल नहीं जाता।

(३) ख़ुदाने तुम्हारे लिये बहुत धन लूट में देनेका बचन दिया है लूटका धन ख़ुदा और रसूल का।

(४) ए मुसलमानों मेरे और अपने शत्रुओंको मित्र मत बनाओ। यदि तुम काफ़िरों पर दया करोगे तो वे तुम्हारे सच्चे धर्मको ग्रहण न करेंगे। वे तुमको और तुम्हारे रसूल को भुठ लावेंगे। क्यों कि तुम्हारा ख़ुदा पर विश्वास है।

(५) जब तुम इसलाम के निमित्त लड़ने के लिये घरसे बाहर जाओगे तो क्या काफिरों पर दया करोगे? जो कुछ तुम अपने दिलमें छिपाते हो मैं उसे जानता हूं और जो तुम प्रकट करते हो उसको भी जानता हूं। जो मुसलमान काफिर के लिये ममता करता है वह सत्य मार्ग से भटक जाता है।

(६) जहां कहीं काफिरों को देखो मारडालो। कैद करलो, घेरलो, घात लगाकर बैठ जाओ। काफिरों के साथ मित्रता नहीं हो सकती। यदि तुम पक्के मुसलमान हो तो काफिरों को क़तल कर डालो।

(७) यदि काफिर तुम्हारे बाप व भाई भी हों और तुम्हारे सच्चे धर्म को अंगीकार न करें तो उनके साथ भी मेल मत करो।

(८) निःसन्देह काफिर अछूत हैं। उनपर प्रत्येक मास में आक्रमण करो।

(६) लड़ो !! लड़ो !! लड़ो !! काफिरों को तीर्थ यात्रा मत करने दो, उनपर विश्वास मत करो, सरल उपायों से उन को मारो, धोखा देकर उनको मारो, सब नियम भंग करदो चाहे खूनका हो, मित्रताका हो, या मनुष्यता का हो, खुदा और रसूल के नामपर काफिरों का नाम पृथ्वी के परदे से मिटा दो। कुरान की कुछ आज्ञाओंका यहां अवतरण दिया गया है। भला कुरान की इन आज्ञाओं के रहते संसार में शान्ति रह सकती है? काफिरों पर दया करना, उनसे मेल करना जब कुरानही नहीं बतलाता तो ये मियां भाई क्यों मेल करेंगे। जैसे उनके कुरान की जंगली शिक्षा है वैसे ये हमारे हिन्दी मुसलमान करते हैं पर इस बीसवीं शताब्दी में अपना ऐब छिपाने के लिये शुद्धि संगठन ऐसे पवित्र काम को झगड़े का कारण बतलाते हैं, पर साफ साफ यह नहीं कहते कि हमारा धर्मही काफिरों से मेल न करने के लिये आज्ञा देता है। जो मुसलमान अपने बाप भाई बन्धु का न हो वह दूसरे का क्या हो सकता है। इन्हीं उक्त ६ आज्ञाओं के अनुसार सब मुसलमानोंने संसार में अमल किया है। स्वामीश्रद्धानन्द और राजपाल आदि की हत्यायें इनके जाहिलाना धर्म का ज्वलन्त प्रमाण। ये तो संसार के पर्दे में सिवाय मुसलमान के और किसी को देखना कुरान की आज्ञा के विरुद्ध समझते हैं। मनुष्यता के नियम का भंग करना उनका धर्म है। इस लिये यदि राजनैतिक प्रगति में धक्का लगा तो इसका कारण मुसलमानों की धार्मिक शिक्षा है न कि शुद्धि। शुद्धि का उद्देश्य आर्य सभ्यता का पुनरुद्धार है जिससे संसार शान्ति का केन्द्र बन सकता है।

परस्पर खान पान

आजकल प्रायः हर एक जातियों में खान पान के भिन्न २ रिवाज हैं। यदि एक जाति का आदमी दूसरी जाति के हाथ का खा लेता है तो वह जातिच्युत कर दिया जाता है और इसमें सनातन धर्म की दोहाई दी जाती है। यही कारण है कि आज किसी शुद्ध हुये पुरुष के हाथ की रोटी पूड़ी आदि खाना तो दूर रहा, जल ग्रहण करने में लोग पाप समझते हैं। खाने पीने में ही सब धर्म समझ बैठे हैं। इसीमें ही ऊंचनीच का भाव विद्यमान है। परन्तु यह भाव सनातनधर्म के विरुद्ध है। सनातनधर्म की नींव इतनी मज़बूत है कि उसका उच्छेद कालत्रय में भी नहीं हो सकता। परन्तु वर्त्तमान सनातनधर्म में ऐसी बीमारी घुस गई है कि जिसके कारण सनातनधर्म का क्रमशः मूलोच्छेद होता जा रहा है। ८४ प्रकार के ब्राह्मण हैं। इनमें परस्पर खान पान नहीं। भेदों को अलग छोड़िये, कान्यकुब्ज कान्यकुब्ज के हाथ की छूई हुई रोटी तो अलग रखिये, पूड़ी तक नहीं खाते। ऐसी ही दशा क्षत्रियों वैश्यों तथा अनेक जाति उपजातियों की है। जो जितना ही आडम्बर करता है वह उतना ही ऊंचा गिना जाता है। यदि कोई ब्राह्मणेतरजाति अपने यहां ब्राह्मणों को निमंत्रण दे, और तरकारी में कहीं नीमक डाल दे, बस ब्राह्मण लोग इस यू०पी० में उसे न खावेंगे पर वे ही बाज़ार में गन्दे हलुवाइयों के हाथ की पूड़ी, नमक डाली हुई तरकारी जूता पहने खरीद ले जाते और खाते हैं। यह आडम्बर नहीं तो क्या है? ब्राह्मण लोग मछली मांस भले ही खा लेंगे परन्तु शुद्ध पको हुआ अन्न खाने में पाप समझते हैं यह पाखण्ड नहीं तो क्या है? सब

जाति के लोग बाज़ार से सोडा वाटर और लेमनेट लेकर वर्फ मिला कर पीते हैं परन्तु यदि कोई दलित साफ़ लोटे में पानी भरकर ला देवे तो उसके पीने में जाति ही चली जाती है परन्तु सोडा वाटर मुसलमान के हाथ का भी पीने में जाति नहीं जाती, क्या यह पाखण्ड नहीं है?

आजकल वर्फ सब लोग पीते हैं। पर चौबे जी तो वर्फ बनाते नहीं, इसके बनाने और बेचने वाले सब जात के लोग हैं। इसे सब लोग लेकर खुशी से पानी में डाल कर पीते हैं। परन्तु छुवा पानी पी लेने से इनकी जात एकादशी के व्रत के समान एक दम नाश हो जाती है भला यह भी कोई धर्म है?

जिन लोगों को सफर करने का अवसर मिला होगा, वे जानते हैं कि रेलगाड़ी में कहां छूवाछूत का विचार रहता है। गर्मी का दिन है, प्यास लगी हुई है, स्टेशन पर गाड़ी पहुंची, लोग लोटा बधना लेकर नल पर टूट पड़े। वहां कोई किसी की जात नहीं पूछता, बधने और लोटे की खूब लड़ाई होती है। रेलगाड़ी ने सीटी दी, बस ले ले कर भगे, गाड़ी में आकर पिया, बतलाओ यदि इसी छूवेछूत को सनातनधर्म मानते हो तो बतलाओ तुम्हारा धर्म कहां रहा?

ऐसे ही दवाखाने की दवा, अत्तारों के यहां के अर्कों का हाल समझो। दवा देने वाले हिन्दू मुसलमान दोनों होते हैं; अर्क दोनों उतारते हैं। डाक्टर मुसलमान हिन्दू दोनों होते हैं। अपने हाथ से पानी मिला कर दवा पिलाते हैं, बतलाइये जात कहां रही? छूवा छूत कहां भाग गया?

गुलाबजल को सब लोग पीते और शादी विवाह में इस्ते-

माल करते हैं पर इसके बनाने वाले हिन्दू मुसलमान दोनों होते हैं। काशी के चौक से मुसलमानी दूकानों से सैकड़ों बोतल गुलाब जल, केवड़ाजल प्रतिदिन हिन्दू लोग खरीदते और अपने काम में लाते हैं अब आप विचारिये कि गुलाब जल पीने वालों की जात कहां रहीं ?

जब गुलाब जल, तथा अत्तारों और डाक्टरों के हाथ की दवा खाने पीने, जगन्नाथ जी में सर्वजात का जूठन खाने से जात नहीं गई तो क्या शुद्ध हुये के हाथ का जल ग्रहण करने या उसके हाथ की पूड़ी खा लेने से जात चली जायगी ? हिन्दुओं के इस ढकोसलेबाज़ी ने हिन्दुओं को इतना कमज़ोर बना दिया है कि मुसलमान और इसाई इन्हें हर प्रकार से गटक रहे हैं।

काशी के शुद्ध सनातन धर्म की सभा में परस्पर खान के विरुद्ध व्याख्यान देते समय एक पण्डित ने बड़े घमण्डके साथ कहा था कि मैं तो अपनी स्त्री के हाथ का भी नहीं खाता दूसरों के हाथ का खाना तो दूर रहे। ये अकल के अन्धे संसार को ठगनेवाले शास्त्रविरुद्ध खान पान का ढोंग रच कर कुलीन बनना चाहते हैं परन्तु शास्त्र यदि सत्य मानते हो तो अकुलीन तो किसी ज़माने से बन गये हो देखो शास्त्र क्या कहता है।

अयज्ञना विवाहेन वेदस्योत्सादनेन च।
कुलान्यकुलतां यान्ति ब्राह्मणातिक्रमेण च॥
ब्राह्मणातिक्रमो नास्ति मूर्खे वेद विवर्जिते।
ज्वलन्तमग्नि मुत्सृज्य नहि भस्मनि हूयते॥

गोभिरश्वैश्च यानैश्च कृष्या राजोपसेवया।
कुलान्यकुलतां यान्ति यानि हीनानि मंत्रतः।
बोधायन स्मृति।

यज्ञों को न करने से, कुविवाह यथा बाल विवाह वृद्ध विवाह के करने से वेद को छोड़ देने से गौ, घोड़ा रथ, कृषी राजसेवा से जीविका चलाने से अथवा वेद के न पढ़ने से कुलीन भी अकुलीन हो जाता है। भला सोचिये तो सही, आज उक्त सब बातें हो रही हैं या नहीं? यदि हो रही हैं तोफिर कुलीनता कहां रही? किसी भी शास्त्र में खाने पीने पर कुलीनता नहीं लिखी। बाप की कुलीनता से अपने को कुलीन कहना निराढोंग और शास्त्र के विरुद्ध है। यह आज्ञा ब्राह्मणों के लिये है वैश्यों के लिये नहीं। क्योंकि उनका तो खेती उत्तम धर्म ही है। इसलिये खान पान के लिये कुलीनता अकुलीनता का झगड़ा लगाना सनातन धर्म के विरुद्ध है।

आपद्धर्म।

सनातनधर्म ने धर्म की मीमांसा इतनी बारीकी के साथ किया है कि कोई भी सनातनी केवल किसी विधर्मी के यहां खा पी लेने से पतित नहीं हो सकता। खा पी लेने पर भी वह सनातनी बना रह सकता है। परन्तु आजकल के आडम्बर ने सनातन धर्म के स्वरूप को एक दम पलट दिया है जिसका प्रमाण इसी लेख में शास्त्रों के बचनों को पढ़ने से मिल जायगा। हमारे शास्त्र कारोंने धर्मको दो भागों में विभक्त किया है। एक साधारण धर्म दूसरा आपद्धर्म।

आपत्ति आ पड़ने पर आपत्काल के धर्म का आचरण करने

से कोई पतित नहीं होता। जैसा कि शास्त्र स्वयं कहते हैं:—

सर्वतःप्रतिगृह्णीयाद् ब्राह्मणस्त्वनयं गतः।
पवित्रं दुष्यतीत्येतद् धर्मतो नोपपद्यते॥
जीवितात्ययमापन्नो योन्नमत्ति यतस्ततः।
आकाशमिव पंकेन न स पापेन लिप्यते॥

मनुस्मृति अध्याय १० श्लोक १०२–१०४

यदि ब्राह्मण विपत्ति में पड़ा हो तो सब जगह से लेकर भोजन करले क्योंकि पवित्र भी अपवित्र होता है ऐसा कहना धर्मके अनुसार नहीं बनता। जो जीवन के संकटमें इधर उधर भोजन कर लेता है वह उसी तरह पाप से लिप्त नहीं होता जैसे आकाश कीचड़ से।

आप देखते हैं आपत्कालीन कैसी आज्ञा धर्म शास्त्रों ने दी है परन्तु धर्म शास्त्र,की दोहाई देनेवाले सबसे श्रेष्ठ और पवित्र बनने वाले स्वयं पवित्र होते हुयेभी अपवित्र बन रहे हैं। कैसा आडम्बर छाया हुआ है।

आपद्गतो द्विजोऽश्नीयात् गृह्णीयाद्वायतस्ततः
न सलिप्यते पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसि। २

(वृ० या० ६–३१८)

आपत्तिमें फंसा हुआ द्विज इधर उधर खालेने से पाप में लिप्त नहीं होता जैसे जलमें कमल

आपद्गतःसं प्रगृह्णन् भुंजानो वायतस्ततः
न लिप्यतैनसा विप्रो ज्वलनार्कसमोहिसः

या० प्रा० प्र० ३ आ० २ श्लो०

आपत्ति में पड़ा हुआ द्विज जहां तहां से लेकर खाता हुआ

पापी नहीं होता, वह प्रकाश मान सूर्यवत् उज्वल ही रहता है। इसी भाव से विश्वामित्र ने मातंग नाम चाण्डाल के घरसे अभक्ष्य मांस खानेकी चेष्टाकी थी। देखो महा भारत शान्ति पर्व अ०११। छान्दोग्य उपनिषद् (१-१०) में लिखा है कि उषस्ति चाक्रायण नाम के एक बड़े भारी महर्षि किसी राजा का यज्ञ कराने जा रहेथे। वे दो दिन के भूखे थे। भूख के मारे उनका प्राण निकल रहा था। मार्ग में एक हाथीवान कुलत्थकी खिचड़ी बनाकर खाने के बाद; जूठी बची हुई खिचड़ी थाली में छोड़ रखी थी। ऋषिने उससे वह जूठी खिचड़ी मांगी। उसके यह कहने पर भी कि खिचड़ी जूंठी है ऋषिने खिचड़ी लेकर खाली और यज्ञ कराने चले गये। परन्तु उसका जल ग्रहण न किया क्योंकि जल विना उनका काम न बिगड़ता था। इतना भारी विद्वान् एक महावत के जूंठे और बासी अन्नको खाता है क्यों कि वह धर्मके तत्व को जानता था जैसाकि पराशरने लिखा है:—

देशभंगे प्रवासेच व्याधिषु व्यसनेष्वपि।
रक्षेदेवं स्वदेहादि पश्चाद् धर्मं समाचरेत्॥

देश भंग में प्रवास में, व्याधिग्रस्त होने पर, तथा आपत्ति में येन केन प्रकारेण अपने शरीर की रक्षा करे पीछे से अपने धर्म का आचरण करे। प्रायश्चित्तादि से दोषनिवृत्ति कर ले!

शंख ऋषि लिखते हैं।

शरीरं धर्मसर्वस्वं रक्षणीयं प्रयत्नतः।
शरीरात्स्रूयते धर्मः पर्वतात्सलिलं यथा॥

शरीर धर्म का सर्वस्व है-प्रयत्न पूर्वक इसकी रक्षा करनी चाहिये। शरीर से ही धर्म होता है जैसे पर्वत से जल।

पराशर के (देश भंगे प्रवासे च) से यह भी सिद्ध होता है कि आज कल जो विद्यार्थी गण विद्योपार्जन के लिये अन्य देशोंमें जाते हैं और वहां दूसरे लोगों के हाथ से खाते हैं वे पतित नहीं होते यदि वे अभक्ष्य गोमांस आदि तथा अगम्या गमन आदि कुकर्म से अपने आपको पतित नकरें। इसी लिये पराशरने कहा है।

यत्र कुत्र, गतो वापि सदाचारं न वर्ज्जयेत्

जहां कहीं जाओ अपने सदाचार का त्याग न करो। यह तो रही आपद्द धर्मकी बात, अब साधारण धर्म की बात सुनिये।

साधारण धर्म।

वर्तमान सनातन धर्म में पितरों के श्राद्ध का माहात्म्य है उसके बारे में ऐसा विधान है कि श्राद्धकर्त्ता श्राद्ध के १ दिन पहले वेदविद् आचरणसम्पन्न ब्राह्मण के पास जाकर निमंत्रण दे कि कल हमारे यहां श्राद्ध है। ब्राह्मण का भी यह कर्त्तव्य है कि वह उस निमंत्रणको अस्वी कार न करे। श्राद्धके दिन उसके घर आकर श्राद्ध काल में बैठकर उसके हाथकी पकाई हुई सभी (दाल भात) पकी चीजों को भोजन करना चाहिये यह सपात्रिकश्राद्ध कहलाता है। इस प्रकार ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तथा सच्छूद्रों के यहां सपात्रिक श्राद्धकाल मेंभोजन का विधान है।जैसा कि शास्त्रकार कहते हैंः—

शूद्रोऽपिद्विविधोज्ञेयः श्राद्धी चैवेतरस्तथा।
श्राद्धी भोज्यस्तयोरुक्तोह्यभोज्योहीतरस्स्मृतः॥
पंचयज्ञ विधानं तु शूद्रस्यापि विधीयते।

तस्य प्रोक्तो नमस्कारः कुर्वन्नित्यं न हीयते ॥

लघु विष्णुस्मृति अ० ५ श्लोक ९ । १०

शूद्र दो प्रकार के होते हैं एक श्राद्ध का अधिकारी दूसरा श्राद्ध का अनधिकारी । श्राद्धी का अन्न खाना चाहिये अश्राद्धी का नहीं । शूद्रको पंचयज्ञ करने का अधिकार है उसकेलिये नमस्कार कहा गया है । ऐसा करता हुआ शूद्र पतित नहीं होता । यदि कोई कहे कि यहां कच्चे अन्नका विधान है तो उत्तर यह है कि कच्चा अन्न तो असच्छूद्र के यहां का भी ग्राह्य है दूसरे ऐसा मानने पर सपात्रिक श्राद्ध कैसे पूर्ण होगा ? अतः मानना पड़ेगा कि शूद्रके हाथकी दाल भातरोटी आदि कच्ची रसोई खाना शास्त्रानुमोदित है । कुछ लोग कहते हैं कि अपनी अपनी जात में जो भोजन करने का रवाज है:और गैर बिरादरी के यहां भोजन करने का रवाज नहीं है, वह यद्यपि शास्त्र के अनुकूल नहीं है तो क्या, देशाचार और कुलाचार तो है इसलिये यह कैसे अमान्य हो सकता है। ऐसे लोगों को चाहिये कि वे निम्न लिखित प्रमाणों पर ध्यान दें ।

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्मकर्तुमिहार्हसि

(गीता)

कृष्ण भगवान गीता में कहते हैं "इसलिये" कार्य अकार्यकी व्यवस्थामें शास्त्र प्रमाण है। शास्त्र प्रमाण देखकर ही कर्म करना चाहिये । इसलिये देशाचार कुलाचार शास्त्रविरुद्ध कैसे प्रमाणित हो सकते हैं क्योंकि गौतम धर्म सूत्र में लिखा है

देशजाति कुलधर्माश्च आम्नायैरविरुद्धाः प्रमाणम् ।

(गौ० ११ अ० २२ सूत्र)

जो देशाचार और कुलाचार और जातिका धर्म आम्नाय (वेदादि) से विरुद्ध न हो वह प्रमाण है इससे यह सिद्ध हो गया कि जाति धर्म देशधर्म वेद विरुद्ध होने से त्याज्य है। अब हमे देखना है कि खान पानके विषय में वेदकी क्या आज्ञा है ?

सनःपावका द्रविणे दधात्वायुष्मन्तःसहभक्षाः
स्याम (अथर्व वेद ६ कां० २ अ०-३ सू०-५ मं०

वह पवित्र करने वाला परमात्मा हमको द्रव्य प्रदान करे हम आयुष्मान और साथ साथ भोजन करने वाले हों।

समानी प्रपा सहवो अन्न भागः
समाने योक्त्रे सहवो युनज्मि ॥ अथर्व-३-६-३७

ईश्वर आज्ञा देता है—तुम लोगों के पानी पीने का स्थान एकही हो तुम्हारा अन्न भाग अर्थात् भोजनादि व्यवहार साथही हो। ए मनुष्यों तुम लोगों को समान ही रस्सी में हम युक्त करते हैं ॥

देखिये वेद एकसाथ भोजन और जलपान का विधान करता है। जब वेदमें ऐसी आज्ञा है तो फिर परस्पर खान पानसे धर्म भ्रष्ट होने की बात सनातन धर्म में कैसे आ सकती है।

फिर देखिये सहभोज‡ की आज्ञा कैसी स्पष्ट है—
तं सखायः पुरोरुचं यूयं वयं च सूरयः।

---

‡ सहभोज का अर्थ एक थाली में बैठकर खाना नहीं है। नोच्छिष्टं कस्य चिद्दद्यात् आदि मनु प्रमाण से एक थाली में बैठकर खाना त्याज्य है।

अश्याम: वाजगन्ध्यं सनेम वाजस्पस्त्यम् ॥

ऋ० ६-६-८-१२

(सखाय:) हे सखाओ (यूयं वयं च) आपऔर हम और (सूरय:) ब्रह्मज्ञानी पुरुष सब कोई मिल कर साथ साथ (पुरोरुचं) सामने में जो स्थापित रुचिप्रद दाल भात रोटी आदि अन्न हैं (तं) उसे (अश्याम:) खावें। वह अन्न कैसा है (वाजगन्ध्यम्) बल प्रद, पुन: (वाजस्पस्त्यम्) बल दायक अनेक प्रकार के व्यंजनादि युक्त। यह मंत्र स्पष्टतया सहभोजिता का प्रतिपादक है ॥ पुनश्च

ओदनमन्वाहार्य्यपचने पचेयुस्तं ब्राह्मणा अश्नीयु:

शतपथ ब्रा० २।४।३।१४

यज्ञ में पाक और भोजन का भी विधान आता है। यजमान के घर पर प्रत्येक ऋत्विज भोजन करते हैं। बड़े बड़े यज्ञों में राजाओं के तरफ से पाकके लिये सूद— पाचक नियुक्त किये जाते थे। वे दास होते थे। ये विविध पाक बनांकर सबको खिलाते थे। इस कारण शतपथ ब्राह्मण कहता है कि अन्वाहार्य्या पचने (जहांपर खाने के पदार्थ बनाये जाते हैं उस गृह और कुण्ड का नामअन्वाहार्य्यपचन है) में पाक करें और उसे ब्राह्मण खावें। पुन: मधुपर्क प्राय: सब यज्ञ में होता है। श्रौतसूत्र कहता है कि इस भोजन के पश्चात् जो अनुच्छिष्ट ओदनादि पदार्थ वच जावें वे किसी ब्राह्मण को देना चाहिये। यथा:—शेषं ब्राह्मणाय दद्यात्। लाट्यायन श्रौत सूत्र १।२।१० शेष खाद्य पदार्थ ब्राह्मण को दे देवे। इससे स्पष्ट है कि पूर्वकाल में कच्ची पक्की

रसोईं का विचार न था। भिक्षा में ब्राह्मणों को ओदन दिया करते थे यथाः—ब्राह्मणाय बुभुक्षिताय ओदनं देहि स्नाताय अनुलेपनं पिपासते पानीयम्। निरुक्त दैवत काण्ड १।१४। भूखे ब्राह्मण को भात दो, नहायेको अनुलेपन और प्यासे को पानी। अभी तक सारस्वत ब्राह्मण अपने यजमान के घरकी कच्ची रसोईं बरबर खाते हैं।

निषाद जातिका अन्न—जब श्री रामचन्द्रजी वनमें जाते समय निषाद से मिले हैं तब वह निषाद सबके लिये अनेक प्रकार का खाद्य पदार्थ ले आया है यथाः—

ततो गुणवदन्नाद्यं उपादाय पृथक् विधम्।
अर्घ्यं चोपानयच्छीघ्रं वाक्यं चेद मुवाचह॥
स्वागतं ते महाबाहो, तवेयम खिला मही।
वयं प्रेष्याःभवान् भर्त्ता साधु राज्यं प्रशाधिनः॥
भक्ष्यं भोज्यं च पेयं च लेह्यं चैतदुपस्थितम्।
शयनानिच मुख्यानि वाजिनां खादनं तथा॥
बाल काण्ड ५१—३७—४०॥

यहां चारों प्रकार के भक्ष्य भोज्य पेय और लेह्य भोजन का वर्णन है। फिर जब रामचन्द्र सेवरी केआश्रम में गये हैं तब उसने पाद्य और आचमनीय आदि सब प्रकार का भोजन दिया है। पाद्यं चाचमनीयं च सर्वं प्रादाद् यथाविधि।

अरण्यकाण्ड अध्याय ७४—७। पीने के लिये जो पानी दिया जाता है उसे आचमनीय कहते हैं।

सूद-सूपकार पाचक आदि जब पूर्वकाल में अश्व मेधादि यज्ञ होते थे तब वहां चारों वर्णों के लोग एकत्र होते थे। क्या आज कलके समान वहांभी ब्राह्मण ही पाचक नियुक्त होते थे। क्या आजक के समान ही "आठ कन्नौजिया नौ चूल्हा" के

लोग कायल थे और अलग २ चूल्हा फूंकते थे । नहीं, उस समय भोजन बनाने वाले शूद्र लोग हुआ करते थे ।

आरालिका सूपकाराः रागखाण्डविकास्तथा ।
उपातिष्ठन्त राजानं धृतराष्ट्रं यथा पुरा ॥

म०भा० आश्रम वासिपर्व प्रथमध्याय श्लोक १९

इससे सिद्ध है कि राजा के पाक करने वाले आरालिक सूपकार रागखाण्डविक आदि पुरुष नियुक्त होते थे ये सब भोजन बनाने वालों के भेद हैं ।

ऐसे रामायण महाभारत आदि ग्रन्थों में विवाह आदिके समय जहां २ भोजन बनाने का वर्णन आया है वहां वहां भोजन बनाने वाले येही दास वर्ग आये हैं, ब्राह्मण नहीं ।

आजकल जहां देखो तहां भोजन बनाने का काम ब्राह्मण करते हैं और पीर बबर्ची भिश्ती ख़र इन चारों का काम अकेले ब्राह्मण देव करते हैं, पर क्या शास्त्रों में इसका कहीं भी उल्लेख है ! क्या भोजन बनाना ब्राह्मण का धर्म है ? कदापि नहीं, यह तो स्त्री और शूद्रों का काम है । देखो आप स्तम्बधर्म सूत्र द्वितीय प्रश्न

आर्याः प्रयता वैश्वदेवे अन्नसंस्कर्तारः स्युः
आर्याधिष्ठिता वा शूद्राः संस्कर्तारः स्युः

बड़ी सावधानी से पवित्र होकर आर्य वैश्वदेव का अन्न पकावे अथवा आर्यों के देखरेख में शूद्रलोग अन्न पकावें ।

अब आप लोग विचार करें कि लोक में कैसा पाखण्ड छाया हुआ है । देवी भागवतकारने क्या ही उचित कहा है:—

पण्डता स्वोदरार्थं वै पाखण्डानि पृथक् पृथक् ।
प्रवर्तयन्ति कलिना प्रेरिता मन्दचेतस ॥ ४३ ॥

अर्थात् अपनी पेट पूजा के लिये मन्द बुद्धिवाले पण्डित

लोग कलिसे प्रेरित हो कर अलग अलग पाखण्ड खड़ा करते हैं। भला ब्राह्मणों का काम वेदादि सच्छास्त्रों का पढ़ना पढ़ाना है कि घर घर भोजन बनाना। शास्त्राकारों ने भोजन बनाने वालों को शूद्र श्रेणी ही में रखा है—यथा

असिजीवो मसीजीवी देवलो ग्रामयाचकः।
धावकः पाचकश्चैव षडेते शूद्रवद्द्विजाः॥

तलवार से जीविका करने वाला, लेखक, मन्दिर का पुजारी, ग्राम में भिक्षा मागने वाला, पठवनिया, रोटी पकाने वाला, ये छ द्विज शूद्र के समान है। इससे स्पष्टपता लगता है कि भोजन बनाना ब्राह्मण का काम नहीं किन्तु शूद्र का काम है शास्त्र कहता है:—

सायं प्रातः सदासन्ध्यां ये विप्रा नोपासते।
कामं तान्धार्मिको राजा शूद्रकर्मसु योजयेत॥

आपस्तम्ब स्मृति।

जो द्विज सायं प्रातः सन्ध्या न करे उसे धार्मिक राजा शूद्र के काम में लगावे। जब ब्राह्मण शूद्रवत् हो गये तो ये उक्त शास्त्रवचन से शूद्र के काम में लगाये गये। आप कहेंगे कि शूद्र का रोटी बनाना कहां धर्म है? ऊपर आपस्तम्ब धर्म सूत्र का प्रमाण तो दिया ही है अब और शास्त्रों का प्रमाण लें।

शूद्रादेव तु शूद्रायां जातः शूद्र इतिस्मृतः॥
द्विजशुश्रूषणपरः पाकयज्ञपरान्वितः॥

शुक्रस्मृति ४६

शूद्र से शूद्रा में उत्पन्न शूद्र है जिसका काम द्विजों की सेवा तथा पाक यज्ञ करना है।

महाभारत विराटपर्व में लिखा है कि जब पांचों पांडव

राजा विराट की सभा में गये तो भीम ने राजा विराट से कहाः—

नरेन्द्र शूद्रोस्मि चतुर्थ वर्णभाक् गुरूपदेशात्परिचारकर्मकृत् ।
जानामि सूपांश्च रसांश्च संस्कृतान् माँसान्य पूपांश्च पचामि शोभनाम् ॥

हे राजा मैं चौथे वर्णका शूद्र हूं । गुरु के उपदेश से सेवा कर्म अच्छी तरह जानता हूं । दाल तथा अनेक प्रकार के सुसंस्कृत रसों तथा मांस को बनाना जानता हूं ।

भीम के ऐसा कहने पर विराट ने शङ्का भी की हैः—

तमब्रवीन्मत्स्यपतिः प्रहृष्टवत्
प्रियं प्रगल्भं मधुरं विनीतवत् ।
न शूद्रतां काचन लक्षयामिते
कुवेर चन्द्रेन्द्र दिवाकरप्रभम् ॥
नसूपकारो भवितुं त्वमर्हसि
सुपर्णगन्धर्वमहोरगोपमः ।
अनीककार्याग्रधरो ध्वजी रथी
भवाद्य मेवारणवाहिनीपतिः ॥

तब विराट ने कहा कि मैं तुम में शूद्र का कोई लक्षण नहीं देखता । तुम तो कुवेर—चन्द्रादि के समान कान्तिवाले हो । तुम सूपकार होने योग्य नहीं हो तुम हमारे हाथियों की सेना के पति बनो ।

इसके उत्तर में भीम ने कहा—

चतुर्थं वर्णोस्म्यह मुग्रशासन, नवैवृणे त्वामहमी दर्शपदम् ।
जात्यास्मि शूद्रो वललेतिनाम्ना जिजीविषुस्त्वद्विषयं समागतः ।

विराटपर्व—

श्रीमन्महा भारतम्

SHRI MAN-MAHABHARATAM,
A new edition mainly based on the South Indian
Text with foot notes and reading edited by
T. R. Krishnacharya and T. R. Vyasacharya.
Proprietors—Madhawa Vilas-Book Depot.,
Kumba Konam.

अब आप लोग समझ गये होंगे कि रोटी बनाना शूद्र का धर्म है। अब बतलाइये आजकल हिन्दुओं का रस्म रेवाज शास्त्र तथा पूर्व पुरुषों के नियम के विरुद्ध है या नहीं ? क्या कोई भी काशी का पण्डित इसे अन्यथा सिद्ध कर सकता है ? इसलिये चारों वर्णों का परस्पर खान पान सनातन धर्म है। आजकल के लोग जो सनातन का नाम लेकर छूवाछूत का समर्थन करते हैं वे ढोंगी और पाखण्डी हैं। अच्छा अब आगे शास्त्रों का प्रमाण लीजिये।

एधोदकं मूलफलमन्नमभ्युद्यतं चयत्।
सर्वतः प्रतिगृह्णीयान्म ध्वथा भयदक्षिणम्॥
आहृताभ्युद्यतां भिक्षां पुरस्ताद प्रचोदिताम्।
मेने प्रजापतिर्ग्राह्यामपि दुष्कृतकर्मणः॥
मनु० अ० ४ श्लो० २४७, २४८

काठ जल फल फूल और बे मांगे आगे रखा हुआ अन्न तथा अभय दक्षिणा सभी से ले लेनी चाहिये। इसी प्रकार अपने पास लाई हुई पहले विना कहे ले आकर आगे रखी हुई भिक्षा चाहे पापी नीच कर्म करने वाला का भी हो तो

उसे प्रजापति ने ग्राह्य बतलाया है। मनुस्मृति के टीकाकार नन्दन पण्डित ने लिखा है:—

न केवलमभ्युद्यत मन्नं ग्राह्यमेव किन्तु भोज्यमपि

बिना मांगे हुये मिले अन्न को केवल ग्रहण ही न करले किन्तु भोजन भी करले। मेधातिथि ने अन्न का अर्थ (पक्वं आमं वा) अर्थात् पकाया हुआ भात आदि या कच्चा अन्न किया है।

शास्त्रों में जहां तहां निषेध वाक्य भी मिलते हैं परन्तु उनका भाव दूसरा है। पक्षपात या बेसमझी से लोगों ने उसका अर्थ भिन्न मान लिया है, यथा,

आसनाच्छयनाद् यौनाद् भाषणात्सह भोजनात्।
संक्रामन्तिहि पापानि तैल बिन्दुरि वाम्भसि॥

एक आसन पर साथ बैठने वा, सोने से योनि सम्बन्ध से तथा बात चीत से, साथ भोजन से, जल पर तेल के बिन्दु के समान मनुष्य के पाप (रोग) एक दूसरे में संक्रान्त हुआ करते हैं।

यहां पर पाप का अर्थ क्षय कोढ़, खुजली आदि अनेक रोगों का है। इसके लिये सब ही निषेध करते हैं और मानना भी चाहिये।

इस खानपान का बखेड़ा शास्त्रीय नहीं है हमारे यू० पी० आदि प्रान्त में आटा को पानी में सानकर पूड़ी बना देने पर सब हिन्दू उसे खा लेते हैं पर मालवा या मारवाड़ में यह परिपाटी नहीं है। वहां आटा को पानी में सानकर बनाई हुई पूड़ी को कोई नहीं खाता परन्तु आंटे को दूध में सानकर बनाई रोटी लोग खालेते हैं लोग छूत नहीं समझते। पञ्जाब में तो ब्राह्मण अपने यजमानों के यहां की रोटी खाते हैं। दूकानों

पर कहार लोग रोटी बनाते और बेचते हैं। सब लोग वहां से रोटी मोल लेकर खाते हैं। इसलिये यह मानना पड़ेगा कि यह सब देशाचार है। इनका शास्त्र से कोई सम्बन्ध नहीं है।

× × × ×

म्लेच्छादि यवनों की उत्पत्ति

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः
स्वंस्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः

मनुके इस लेखसे यह पता चलता है कि पृथ्वी पर के रहने वाले सब मनुष्योंने इस देश में उत्पन्न वेदविद् ब्राह्मणों से अपने २ आचार और चरित्र को सीखा था। इसी देश के विद्वान सर्वत्र जा जाकर वैदिकधर्म का प्रचार करते और वैदिक सभ्यता फैलाते थे परन्तु दुर्भाग्यवश आज यहांके लोग सिकुड़ते चले जा रहे हैं। अपने पूर्वजों के गौरव को भूलकर कूपमण्डूकवत् बने बैठे हैं और शुद्धि को बुरा समझते हैं। परन्तु सत्यतः म्लेच्छादि जितनी जातियां आज भारतवर्ष के बाहर हैं वे सब ब्राह्मणादि के वंशज हैं। यहां से सम्बन्ध विच्छिन्न हो जाने से कालान्तर में वे सब के सब म्लेच्छ बन गये। मनुजी लिखते हैं।

* शनकैस्तु क्रियालोपादिमा क्षत्रियजातयः।
वृषलत्वं गता लोके ब्राह्मणादर्शनेन च॥

*नोट—पं० राजाराम जी अपनी शुद्धिको पुस्तक के पृ ७०, ७१ में इन जातियों का वर्तमान नाम दिया है यथाः—औड्—उडिया की अछूत जातियां और पंजाब के ओड़ा, द्रविड़ दक्षिणी भारत में प्रसिद्ध हैं। यवन—ग्रीक, यूनानी—यूनान के रहने वाले, पीछे से यह शब्द सिन्धु पार की सब जातियों के लिये वर्ता गया है। काम्बोज, कम्बोज के रहने वाले व्रात्य क्षत्रिय, इनका अपना स्वतंत्र राज्य था। वर्तमान कम्बोज उन्हीं में से है। दरद चित्राल और गिलगित आदि उत्तर पश्चिमी देशों में रहते थे। [पल्हव पर्शियन ईरान के रहने वाले] वर्वर—अफ्रीका देश निवासी शक—सीथियन, किरात आदि व्याध थे।

पौण्ड्रकाश्चौड्रद्रविडा काम्बोजा यवनाःशकाः ।
पारदाः पह्लवाश्चीनाः किराता दरदाः खसाः ॥
मुखबाहूरुपज्जानां या लोके जातयो वहिः ।
म्लेच्छवाचश्चार्यवाचः सर्वे ते दस्यवःस्मृताः

ये क्षत्रियादि जातियां अपनी वैदिकक्रिया के लोपके कारण धीरे धीरे शूद्रत्वको प्राप्त होगईं क्योंकि उनका सम्बन्ध ब्राह्मणों से न रहा। वे कौन हैं? आगे बतलाते हैं:—

पौण्ड्रक, औड्र द्रविड काम्बोज, यवन शक, पारद पल्हव चीन किरात दरद खस इत्यादि! ब्राह्मणादि जातियों से भिन्न जो इस देशके बाहर जातियां हैं चाहे वे आर्यभाषा बोलती हों, चाहे म्लेच्छभाषा सबकी सब दस्युके नाम से प्रसिद्ध हैं।

अब इस मनु के प्रमाण से आप समझ सकते हैं कि यूनान चीन आदिके सब लोग पहले क्षत्रिय थे पीछे से म्लेच्छ बन गये। महाभारत शान्तिपर्व के राजप्रकरण के ६५ वें अध्याय में इसी मनु के वचन की पुष्टि की गई है।

यवनाः किराताः गान्धाराश्चीना शबरबर्बराः
शकास्तुषाराः कंकाश्च पल्हवा श्चांध्र मद्रकाः ॥१३॥
चौड्राः पुलिन्दारमठाः काम्बोजाश्चैव सर्वशः
ब्रह्मक्षत्रप्रसूताश्च वैश्याः शूद्राश्च मानवाः

यवन किरात गान्धार चीन शबर बर्बर शक तुषार कंक, पल्हव, आन्ध्र मद्रक चौड्र पुलिन्द रमठ काम्बोज इत्यादि जातियां ब्राह्मण और क्षत्रियों की सन्तान हैं।

अब इन उक्त मनु और महाभारत के प्रमाण से यह बात स्पष्ट है कि संसार की सम्पूर्ण जातियां ब्राह्मण क्षत्रियों और वैश्यों की औलाद हैं। समयान्तरमें कर्मलोप से सब भ्रष्ट हो कर शूद्र बन गईं।

न केवल कर्म लोप से ही म्लेच्छ बने, बल्कि वे बलात्कार से भी म्लेच्छ बनाये गये। विष्णु पुराण अंश ४ अ० ३ तथा ब्रह्माण्ड पुराण उपो०पा० ३ पृ०१६० छापा बम्बई में लिखा है।

ततः शकान् सयवनान् काम्बोजान्पारदांस्तथा
पल्हवांश्चैव निःशेषान् कर्त्तुं व्यवसितोनृपः ॥
ते हन्यमाना सगरेण वीरेण महात्मना।
वशिष्ठशरणं सर्वे सम्प्राप्ताः शरणैषिणः ॥
वशिष्ठोवीक्ष्यतान् युक्तान् विनयेन महामुनिः।
सगरं वारयामास तेषां दत्वाभयं तदा ॥१३६॥
सगरं स्वां प्रतिज्ञांच गुरोर्वाक्यं निशम्यच।
जघान धर्मं वै तेषां वेषान्यत्वं चकार ह ॥
अर्धं शकानां शिरसो मुण्डयित्वा व्यसर्जयत्।
यवनानां शिरः सर्वं काम्बोजानां तथैव च १३८
पारदा मुक्तकेशाश्च पल्हवाः श्मश्रु धारिणः
निःस्वाध्याय वषट्काराः कृतातेन महात्मना१३९
शका यवनकाम्बोजाः पल्हवाः पारदैः सह।
कलिस्पर्शा माहिषिका दार्वाश्चोला खसास्तथा ॥ १४० ॥
सर्वे ते क्षत्रियगणाः धर्मस्तेषां निराकृतः।
वशिष्ठवचाना त्पूर्वं सगरेण महात्मना ॥ १४१ ॥

सगर के बाप बाहुका राज्य हैहय तालजंघादि चन्द्रवंशीय क्षत्रियों ने छीन लिया। वह युद्धमें हार कर अपनी गर्भवती स्त्री के साथ जंगल में चला गया। और वहीं और्व ऋषि के आश्रम के पास उसकी मृत्यु हुई। जब उसकी स्त्री पति के साथ सहमरण को तैयार हुई ता ऋषिने उसे समझाया कि तुम ऐसा मतकरो तुम्हारे गर्भ से एक तेजस्वी पुत्र पैदा होगा जो शत्रुओं को जीतकर चक्रवर्ती राजा बनेगा। रानो सती न

हुई और उसके पेटसे सगर पैदा हुआ। जब वह बड़ा हुआ तो अपनी माता से अपने बनमें आनेका कारण पूछा। तब माता ने सब हाल कह सुनाया। माता की बात सुनकर सगर ने अपने शत्रुओंके मारने की प्रतिज्ञा की। सेना एकत्र कर युद्ध करने लगा। उसके डरके मारे हैहय तालजंघादि क्षत्रिय भाग कर वसिष्ठ के पास आये और प्राणरक्षा करने के लिये प्रार्थना कीः—

श्लोकार्थः—तब राजाने शक, यवन कम्बोज पारद पल्हव आदि क्षत्रियों के सर्वनाश करने का विचार किया। वे सब मारखाने पर वसिष्ठ के शरण में गये वसिष्ठने उन्हें अभयदान देकर सगर को मना कर दिया।

सगर ने गुरु की बात सुनकर और अपनी प्रतिज्ञाका विचार करके उनके धर्म को मार डाला अर्थात् उन्हें आर्यधर्म से च्युत कर दिया और उन लोगों का वेष आर्यों से भिन्न प्रकार का कर दिया! शकों का शिर आधा मुड़वा कर छोड़वा दिया। यवन और कम्बोजों का सब शिर मुड़वा दिया अर्थात् चोटी सोटी सब गायब कर दिया। पारद लोगों को यह आज्ञा हुई कि वे सदा बाल बिखेरे रहें, पल्हवों को दाढी रखने की आज्ञा हुई। और सब स्वाध्याय और वषट्कार अर्थात् वैदिकधर्म के कर्मकाण्ड से पृथक् कर दिये गये। अब उक्त प्रमाणों से आपलोग समझ गये होंगे कि यवनादि सब चन्द्रवंशीय क्षत्रिय थे, वे सब बलात्कार वैदिक धर्मसे च्युतकर दिये गये। ब्राह्मणों ने उन्हें त्याग दिया। सब पूरे म्लेच्छ बन गये।

अब यह बात सिद्ध हो चुकी कि आजकल जितने विधर्मी देखे जा रहे हैं वैदिकधर्म से गिरे हुये क्षत्रियादि हैं। अब प्रश्न यह है क्या ये सब वैदिक धर्म में पुनः लिये जा सकते हैं या

नहीं ? क्या पतित लोग फिर उठ सकते हैं या नहीं। वेद और शास्त्रों की इस में क्या सम्मति है ? इतिहास इस विषयमें हमें क्या बतलाता है ? हमारे पूर्वज पतितों का प्रायश्चित्त करके फिर वर्णधर्म के भीतर उन्हें लेते थे या नहीं ?

शुद्धि के प्रमाण।

शुद्धि पर वेद की आज्ञा तो यह है कि कृण्वन्तो विश्वमार्यं (९-६३-५) संसार मात्र को आर्य बनाओ। जो लोग अनार्य हों दस्यु हों पतित हों इन सब लोगोंको सदुपदेश द्वारा आर्य बनाना वेद में स्पष्ट है। अनेक विरोधी कह बैठते हैं कि वेद में मुसलमान ईसाई की शुद्धि कहां लिखी है ? उन अक्लके दुश्मनों से कहना चाहिये कि ईसाई मुसलमान क्या विश्व से बाहर हैं ? वेद ने तो विश्वमात्र को आर्य बनाने का आदेश दिया है फिर इस प्रकार प्रश्न करना दुराग्रह और वेदानभिज्ञता नहीं तो क्या है ? ईसाई मुसलमान मतविशेष है जिनके आरम्भ हुये प्रायः १९०० और १३०० वर्ष हुये हैं तब इन लोगों का नाम वेद में कहां से आ सकता है ?

अब हमें यह विचार करना हैं कि इन म्लेच्छादिकों का पुनः परिवर्तन कैसे हो सकता है ? आर्य नाम ही से द्विजका ग्रहण होता है शूद्र का नहीं। जिसका दो बार जन्म हो उसे द्विज कहते हैं। "द्वाभ्यां संस्काराभ्यां जायते इति द्विजः"। एक जन्म तो माता के गर्भ से दूसरा जन्म उपनयन संस्कार द्वारा होता है। इसलिये शास्त्रों के अनुसार बिना यज्ञोपवीत संस्कार के कोई द्विज नहीं बन सकता। इसके लिये ऋषियों ने भिन्न २ समय नियत कर रखा है।

गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।

गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः ॥
आषोडशाद्ब्राह्मणस्य सावित्री नातिवर्तते ।
आद्वाविंशात् क्षत्रबन्धो राचतुर्विंशते विशः ॥३॥
अत ऊर्द्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः
सावित्रीपतिता व्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिता ॥३९॥

गर्भ के आठवें वर्ष में ब्राह्मणकुमार का ११ वें वर्ष में राजकुमार का, बारहवें वर्ष में वैश्यकुमार का उपनयनसंस्कार होना चाहिये। १६ वर्षपर्यन्त ब्राह्मण बाईस वर्षपर्यन्त क्षत्रिय तथा २४ वर्ष तक वैश्य के लिये उपनयन संस्कार की अंतिम अवधि है। इस अवधि तक यदि गुरुके पास अध्ययन करने चला जाय तो उसे गुरुको पढ़ाना पढ़ेगा उसकी सावित्री नहीं जाती। यज्ञोपवीत काल की यह परमावधि है इसके उपरान्त (यज्ञोपवीत न होने पर) सावित्री पतित हो जाते हैं तब उनकी संज्ञा व्रात्य होती है। और वे आर्यों में निन्दित हो जाते हैं:—

नैतै रपूतै र्विधिवदापद्यपि हिकर्हिचित् !
ब्राह्मान् यौनांश्च संबन्धानाचरेद्ब्राह्मणः सह ॥

इन पतित लोगों के साथ आपत्कालमें भी खान पान शादी विवाह न करे। पर क्या इस नियम का पालन हिन्दुओं के अन्दर होता है? आज कल हिन्दुओं के अन्दर जो अनेक जातियां देखी जाती है वे सब ब्राह्मण क्षत्रियादि की व्रात्य सन्तान हैं। इसी प्रकार यवनादि भी व्रात्य हैं क्योंकि शास्त्रों के प्रमाणोंसे यह सिद्ध हो चुका है कि ये आर्यों के वंशज हैं। साथ ही जो वर्तमान द्विजवर्ण वेदविहीन अथवा मोटे शब्दों में विद्याविहीन हैं सबके सब व्रात्य हैं चाहे उनका जनेव हुवा ही क्यों न हो! यदि पूर्वकाल का राजनियम होता तो

सब निरक्षण भट्टाचार्य्य लोग निःसन्देह व्रात्यश्रेणी में आगये होते परन्तु राजव्यवस्था उठ जानेसे व्रात्य होते हुये भी अपने को ब्राह्मणादि कहते हैं।

अब देखना यह है कि इन व्रात्यों का पुनः संस्कार क्या हो सकता है? क्या ये पुनः अपने २ वर्णोंमें मिलाये जा सकते हैं या नहीं?

इसपर एक व्यवस्था रणबीरकारित प्रायश्चित्त से उद्धृत की जाती है ताकि पाठक स्वयं अनुभव कर सकें कि किस प्रकार एक द्विजाति यज्ञोपवीतसंस्कार के न होने से निकृष्ट बनजाता है और फिर उसके होने से उच्च बन जाता है देखो रणबीरकारितप्रायश्चित्त प्र० १२ पृ ६७

अथ व्रात्यता

व्रात्य इति। व्रातशब्दादिवार्थेयप्रत्ययेन निष्पन्नः। यद्वा व्रातमर्हतीतिव्रातं नीचकर्म दण्डादिभ्योय॥ इति व्रात्यः। शरीरायासजीवी व्याधादिकोऽष्टाविंशतिसंस्कारहीनो भ्रष्टगायत्रीकः। षोडशवर्षादूर्ध्वमप्यकृतव्रतबन्धो दानाद्यकर्ता द्विजो व्रात्यइत्यमरटीका राज मुकुटी।

व्रातस्फञोरस्त्रियाम् इतिसूत्रे कौमुद्यांतुनानाजातीया अनियतवृत्तयः। उत्सेधजीविनः संघाः व्राता इति।

व्रात्यानाहमनुः—मनु १० २०

द्विजातयः सवर्णासु जनयन्त्यव्रतांस्तुयान्।
तान् सावित्रीपरिभ्रष्टान् व्रात्यानिति विनिर्दिशेत्॥
व्रात्यात्तु जायते विप्रात् पापात्माभूर्जकण्टकः।
आवन्त्यवाटधानौच पुष्पधः शैख एवच॥
झल्लो मल्लश्च राजन्याद् व्रात्यान्निच्छिविरेवच

नटश्च करणश्चैव खसो द्रविड एवच ॥

वैश्यात्तु जायते व्रात्यात् सुधन्वाचार्य एवच ।

कारुषश्च विजन्माच मैत्रः सात्वत एवच ॥

अर्थः—अब वृात्यका प्रायश्चित्त करने के लिये व्रात्यशब्द का अर्थ करते हैं। व्रात्य इति। व्रात शब्द से परे सादृश्यार्थ में य प्रत्यय आनेसे वृात्य शब्द सिद्ध हुआ।

दूसरा अर्थ जो—नीच कर्मके योग्य हो। दंडादिभ्यो इस सूत्र से य प्रत्यय आया तब व्रात्य शब्द सिद्ध हुआ। वृात्य कौन है सो आगे बतलाते है। शारीरिक परिश्रम से जो जीविका किया करते हैं बोझा आदि ढोते हैं, जो अट्ठाइस संस्कारों से भ्रष्ट हैं और १६ वर्षके उपरान्त भी जिनका व्रतबन्ध आदि हुआ नहीं है और दानक्रिया न करने वाला हो तो इस प्रकार के द्विज का नाम व्रात्य है। यह अमरकोष की राजमुकुटी टीका में लिखा हैं।

व्रातस्फञोरस्त्रियाम् यह जो कौमुदीका सूत्र है इससे सिद्ध होता है सो कहते हैं। अनेक जातियां जिनकी वृत्तिवा पेशा कोई नियत नहीं है। इधर उधर मजदूरी करके जो जीविका चलाते हैं। कभी भार ढोने का काम करते हैं, कभी हल चलाते हैं कभी कुछ कभी कुछ अर्थात् शरीरायास से जो जीविका चलाते हैं ऐसे लोगों के समूह को व्रात्य कहते हैं। वैसे ही व्रातेन जीवति, इस सूत्र का अर्थ यह है "शरीर के आयास से जो जीविका करता है, जो बुद्धि द्वारा जीविका नहीं करता (व्रातेन जीवति.) इस सूत्रमें महाभाष्यका भी प्रमाण कहते हैं (व्रातमित्यादिना) अब व्रातों को मनुजी कहते हैं (श्लोक १०—२०) जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य अपने २ वर्ग की स्त्री में

सन्तान पैदा करें और उनका उपनयनादिसंस्कार न हो तो वे गायत्री से भ्रष्ट हों उनका नाम व्रात्य हो। उनसे निम्न लिखित सन्तान पैदा होती हैं।

व्रात्य विप्रसे तुल्य जातिकी स्त्री में जो सन्तान उत्पन्न होती है उसका नाम भूर्जकण्टक आवन्त्य वाटधान, † पुष्पध, शैख आदि हैं ॥ २१ ॥

व्रात्य क्षत्रिय से समान जाति की स्त्रियों में उत्पन्न व्रात्यों-नाम झल्ल; मल्ल निच्छिवि नट करण खस द्रविड़ है ॥ २२ ॥

व्रात वैश्य से समान जातिकी स्त्री में उत्पन्न सन्तान का नाम सुधन्वाचार्य कारूष विजन्मा मैत्र सात्वत है ॥ २३॥

पाठकगण स्वयं समझ गये होंगे कि आजकल के नट आदि व्रात्य हैं जिन्हें स्मृतिकारों ने कालान्तर में अन्त्यज मान लिया है।

इस प्रकार व्यवस्था बतलाकर आगे उसी पुस्तक के पृ० १३० में इनकी शुद्धि का वर्णन करते हुये आपस्तम्ब सूत्र में व्यवस्था दी है।

---

† शैख—आज कल ये शैख जो व्रात्य ब्राह्मण की सन्तान थे, मुसलमानी धर्म स्वीकार करके उसी शेख नाम से पुकारे जाते हैं। और २ व्रात्य जातियों के नाम उक्ततीनों श्लोकमें गिनाये गये हैं उनमें नट करण खस द्रविड़ तो प्रसिद्ध हैं शेष का पता नहीं कि आज कल उन्हें क्या कहते हैं। सुधन्वाचार्य पुष्पध धानवाट आवन्त्य निच्छिवि कारूष विजन्मा मैत्र सात्वत का वर्तमान नाम क्या है इस पर अभी किसी ने प्रकाश नहीं डाला। मालूम होता है कि उक्त सब व्रात्य जातियां आर्यों से अपमानित होने के कारण मुसलमानों में मिल गई और अपने नाम को खो बैठीं

सम्पादक—

यस्य प्रपितामहादेरुपनयनंनस्मर्यते तत्रार्थादेतेषामपि पुरुषाणामनुपनीतत्वं ते सर्वे श्मशानवदशुचयः तेष्वागतेष्वभ्युत्थानं भोजनंचवर्जयेत् आपद्यपिन कुर्यादित्यर्थः। तेषां स्वयमेव शुद्धिमिच्छतां प्रायश्चित्तानन्तरमुपनयनम्।

जिनके प्रपितामहादि से यज्ञोपवीत न हुआ हो उनको भी अनुपनीतत्व है। वे श्मशान के तुल्य अपवित्र हैं। इनके आने पर खड़ा होना या उनके साथ खानपान आपत्ति में भी न करे। यदि वे अपनी शुद्धि की इच्छाकरें तो उनको प्रायश्चित्त कर कर यज्ञोपवीत दे देना चाहिये।

तत ऊर्ध्वं प्रकृतिवत्-आपस्तम्ब १-१-२ प्रायश्चित्त के बाद प्रायश्चित्ती अपने उसी वर्ण को प्राप्त होता है।

व्रात्य और शूद्र

आप लोगों ने ऊपर के लेख में पढ़ा होगा कि शरीरिक अभ्यास करने वाले व्रात्य कहे गये हैं। व्रात्यों के लिये जो निषेध है वही शूद्रों के लिये भी है क्या व्रात्य और शूद्र एक ही हैं?

वेदके अनुसार शूद्र एक वर्ण है। वह समाज का एक अंग है। वेदों में शूद्रों की कहीं भी निन्दा नहीं की गई हैं किन्तु चारों का दरजा अपने स्थान पर समान है। फिर क्या कारण है कि शास्त्र और स्मृतियों में शूद्रों की निन्दा देखी जाती है इसका उत्तर यह है कि धर्मशास्त्रों में शूद्र किसको कहते हैं? क्या किसी जाति विशेष को अथवा किसी व्यक्ति विशेष को? जब तक इस बात को अच्छी तरह समझ न लेंगे इस विवाद से पार नहीं हो सकते इस लिये आप लोग इसे यहां पर अच्छी तरह समझलें।

जैसे वेदोंमें दास शब्दका अर्थ बहुत नीच था परन्तु धीरे२ इसका अर्था बहुत अच्छा होगया क्योंकि सेवक के अर्थ में इसका प्रयोग होने लगा।

परन्तु शूद्र शब्द में इसके विपरीतकार्य हुआ। जिनको अनध्ययन के कारण ऋषियों ने व्रात्य संज्ञा दी थी वेही व्रात्य धीरे धीरे शूद्र कहलाने लगे अर्थात् वह व्रात्य शब्द धीरे धीरे शूद्र शब्द का पर्याय बन गया। इसके प्रयोग में कुछ भी भेद न रहा। इस प्रकार का बहुत हेर फेर देश काल के अनुसार शब्दशास्त्र में हो जाता है। शब्द शास्त्र जानने वाले इसे पूर्ण-तया जानते हैं। जैसे वेदों में असुर शब्द ईश्वर शूर बीर, सूर्य मेघ देवादि अर्थों में विद्यमान था परन्तु ब्राह्मण ग्रन्थों से लेकर यावत्संस्कृत ग्रन्थों में अब इसकाअर्थ केवल दुष्ट ही रह गया इसी प्रकार यमयमी अश्वी, उर्वशी आदि शब्दों के अर्थ में बड़ा परिवर्तन हो गया है। इसी प्रकार वेदों में उत्तम

वेद में दास का का अर्थ चोर डाकू दुष्टजन, हिंसक, व्यभिचारी छली चुगुलखोर आदि के हैं (देखो ऋग्वेद १-३३ (४-५-७) १-५१ (५-६-७-६) १-११७ २१, १-१३०-८, २-३४-६, ४-२६-२ ४-३०-१८ ५-३४-६, ६-१८-३, ६-२२-१०, ६-२५-२, ६-३३-३ ६-६०-६, ७-५-६, ७-१८-७, ८-२४-२७, १०-३८ ३, १०-४३-४, १०-४६-३ १०-६६-६, १०-८३-१ श्रेष्ठ यजनशील, व्रतो ब्रह्मविद् सज्जन धार्मिक-शूर बीर को आर्य और नीच अव्रती,-ब्रह्म-द्वेषी, असज्जन अधार्मिक क्रव्याद चोर डाकू व्यभिचारी आदि को दास यादस्यु हते हैं। ऊपरके मंत्रो में आप दोनों शब्दोंके अर्थ पावेंगे मनुस्मृति के अनुसार चारों वर्णों को छोड़कर शेष जातियों का नाम दास या दस्यु है :

अर्थ रखने वाला शूद्र शब्द भी ब्राह्मण और धर्मशास्त्रादिकों में निकृष्टवाचक हो गया। वेदों में जिसको दास वा दस्यु कहते हैं उसी को ब्राह्मण और मनुस्मृत्यादि ग्रन्थों में शूद्र कहते हैं। और इसी हेतु शूद्र नाम के साथ साथ दास शब्द का प्रयोग मन्वादिकों में विहित है। वेदों में कहीं भी शूद्र को दास वा दस्यु की पदवी नहीं दी गई है। वेदों में शूद्र का दर्जा ब्राह्मणादि के तुल्य ही था। क्रमशः शूद्र का अर्थ बहुत नीचे गिर गया। ऊपर के लेख में आप लोगों ने देख लिया है कि व्रात्यों के लिये जिन २ बातों का निषेध किया है वही शूद्रों के लिये स्मृतिकारों ने निषेध किया है। ब्राह्मणादि किसी की भी संतान असंस्कृत होने पर व्रात्य कहलाती है "नैनानुपनयेयुर्नाध्यापयेयुर्नयाजयेयुर्नैभिर्विवाहेयुः गोभिलगृह्यसूत्र" इनको न तो उपनीत करें न इन्हें पढ़ावें, और न इन्हें यज्ञ करावें और न इनके साथ खान पान विवाहादिका सम्बन्ध रखे। यह गोभिलाचार्य का का मत है। मनु भी यही कहतेहैं। अब आप विचार करें कि इस व्रात्य को ही शास्त्रों में शूद्र कहा है इसलिये शूद्र और व्रात्य दोनों एक ही हैं। इसमें एक यह भी कारण है कि—

ब्राह्मणः क्षत्रियः वैश्यः त्रयोवर्णा द्विजातयः।
चतुर्थ एक जातिस्तु शूद्रो नास्तितु पंचमः॥

इस मनु १०।४ केवचन अनुसार वर्ण चार ही हैं। ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य द्विजाति अर्थात् दो जन्म वाले और चौथा शूद्र एक जाति अर्थात् एक जन्म वाला है क्योंकि इसके उपनयन का निषेध पाया जाता है। अतः व्रात्य और शूद्र एक ही हैं। एक जाति शूद्र में सब ही आगये क्योंकि चार वर्ण के सिवाय कोई दूसरा वर्ण नहीं। अब आप समझ गये होंगे कि व्रात्य

और शूद्र एक ही हैं। पीछे से स्मृतिकारों ने अन्त्यजों की कल्पना करके सच्छूद्र और असच्छूद्र की सृष्टि की।

वृषल और शूद्र।

शूद्रका पर्याय वाची वृषल शब्द शूद्र और व्रात्य को एकही सिद्ध करता है। चाहे वह किसी द्विजकी सन्तान क्यों न हो धर्म का लोप करने से वह वृषल कहलावेगी यथाः—

वृषोहि भगवान् धर्मस्तस्ययः कुरुते ह्यलम्।

वृषलं तं विदुर्देवास्तस्माद् धर्मं न लोपयेत॥ मनु ८—१६

वृष यह धर्म का नाम है इसको जो नाश करता है अर्थात् जो स्वयं धर्म न करता और न करवाता किन्तु धर्मकर्म से क्या होता है इत्यादि बातें कहकर जो धर्म का नाश करता है उसे विद्वान लोग वृषल अर्थात् शूद्र कहते हैं इसलिये धर्म का लोप कभी भी न करे। धर्म के लोप करने के ही कारण यवन शक पारद चीन किरात दरद खसआदि क्षत्रिय जातियां शूद्र हो गईं (मनु० अ० १० श्लो० ४३, ४४) इससे स्पष्ट है कि जो धर्म कर्म रहित है वह शूद्र है यदि आप कहें कि यहां तो वृषल शब्द है। शूद्र नहीं तो आप अमरकोष देखिये "शूद्राश्चावरवर्णाश्च वृषलाश्च जघन्यजाः॥ अर्थात् शूद्रके अवरवर्ण, वृषल जघन्यज ये पर्याय वाची शब्द हैं। अध्ययन अध्यापन के पश्चात् भी लोग धर्मलोपक बन जाते हैं ऐसे पुरुष सब निन्दनीय और शूद्र पदवाच्य हैं। इसमें अब सन्देह नहीं रहा कि शूद्र किनको कहते हैं। शूद्र किसी जाति विशेष का नाम नहीं किन्तु अध्ययन व्रत रहित धर्म लोपी पुरुष का नाम शूद्र है। व्रात्य भी इसी को कहते हैं इसलिये

व्रात्य और शूद्र एकही हैं। पूर्व लेख से आपको पता चल गया होगा कि अव्रती पुरुष का नाम व्रात्य है। वेदों में इसी अव्रती को दासवा दस्यु कहा गया है परन्तु मन्वादि धर्मशास्त्रों में इसी व्रात्य को शूद्र कह कर पुकारा है।

अस्तु, अब प्रकृत विषय की ओर चले। प्रकृत विषय को छोड़ आगे बढ़ना अच्छा नहीं, यहां उचित समझ कर व्रात्य और शूद्र का सम्बन्ध दिखला गया। ऊपर के प्रमाण से यह सिद्ध हो चुका कि विश्व भर में आर्यों से हीं पतित होकर यवन म्लेछादि बने हैं और यह भी दिखलाया गया कि इनको फिर आर्य बना सकते हैं जैसा कि वेदों की आज्ञा है।

जब उक्त प्रमाणों से यह पता चला कि स्वधर्म त्याग से मनुष्य पतित बन जाता है तो क्या यह सत्य नहीं है कि भारतवर्ष की वर्तमान सूरी सेठा चड्ढे माली मलकाने राजपूत गुजर बढई काछीकोली नाई शेख आदि मुसलमानजातियां औरंगजेब आदि मुसलमानों के जुल्म से अपना धर्मत्याग कर मुसलमान बनीं? यदि बनी हें अथवा बनाई गई हैं तो क्या ऋषियों की आज्ञा नहीं! कि:—

देशभंगे प्रवासे च व्याधिषु व्यसनेष्वपि।
रक्षेदेवस्वदेहादि पश्चाद्धर्मं समाचरेत्॥

देशके नष्ट होने पर, प्रवास में, व्याधिग्रस्त होने पर दुःख पड़ने पर अपने देह की रक्षा करे पीछे से प्रायश्चित्तादि करके अपने कर्मका आचरण करे। पराशर २७-४१।

व्रात्यों को पुनः आर्य बनाने के लिये यज्ञ किया जाता था जिसका नाम व्रात्य स्तोमयज्ञ है। इसयज्ञ द्वारा ३३ व्रात्य और उनका एक सरदार, एक साथ ३४ मनुष्य शुद्धि द्वारा आर्य

बना लिये जाते थे और उनको द्विजों का अधिकार दे दिया जाता था। सामवेद के ताण्ड्य ब्राह्मण के १७ वें अध्याय में इसका विस्तृत विवरण है। लाखों अनार्य इसी प्रकार ३४ के समूह में शुद्ध करके आर्य बनाये गये। इसी प्रकार लाट्यायन ब्राह्मण में ४ प्रकार के हीन व्रात्य आदिकों का व्रात्यस्तोमयज्ञ द्वारा शुद्धि और प्रायश्चित लिखा है

प्रायश्चित्त क्या है ?

प्रायश्चित्त किसे कहते हैं और क्यों करना चाहिये प्रायश्चित्ती कौन है ? इस पर मनु की व्यवस्था सुनियेः—

प्रायो नाम तपः प्रोक्तं चित्तं निश्चय उच्यते ।
तपोनिश्चय संयुक्तं प्रायश्चित्तमितिस्मृतम् ॥

प्राय नाम तप का है और चित्त नाम निश्चय का है। तप और निश्चय को प्रायश्चित्त कहते है। दूसरे आचार्य कहते हैं।

प्रायः पापं विजानीयात् चित्तंवैतद्विशोधनम् ।

प्राय का अर्थ पाप है और उस पाप का दूर करना ही चित्त है अर्थात् पापों के दूर करने के लिये शास्त्रों में जो क्रिया कलाप बतलाया गया है, जिनके अनुष्ठानसे पातकी की आत्मा शुद्ध होकर पवित्र बन जावे उसका नाम प्रायश्चित्त है । अब प्रश्न यह है कि प्रायश्चिती कौन है ? मनु बतलाते हैं।

अकुर्वन् विहितं कर्म निन्दितं च समाचरन् ।

प्रसक्तश्चेन्द्रियार्थेषु प्रायश्चितीयते नरः ॥११-४४-

संध्या-अग्नि होत्रादि विहितकर्म के न करने से, निन्दित कर्मों के करने से, और विषयों में अत्यंत आसक्त होने से मनुष्य प्रायश्चिती हो जाता है ।

पाठक वृन्द, थोड़ा ध्यान देकर विचार करें कि इस शास्त्र प्रमाण से, आजकल के द्विजमात्र प्रायश्चित्ती बने बैठे हैं। आज रुपये में पौने सोलह आना द्विज ऐसे हैं जो प्रति दिन के लिये विहित सन्ध्या अग्निहोत्र पंच महायज्ञ आदि नहीं करते। आजकल की विषयासक्ति किसी से छिपी नहीं है। चोरी व्यभिचार हिंसा, सुरापान आदि निन्दित कर्मों का कितना प्रचार द्विजों में हो गया है यह बात सर्वथा प्रकट है। ऐसी दशा में यवन आदि की शुद्धि तो दूर रहे, हिन्दुओं में रुपये में १५ आना प्रायश्चित्त के भागी हैं। तिस पर भी म्लेच्छादि की शुद्धि में व्यर्थ टांग अड़ाते हैं। इससे बढ़कर हमारी अज्ञानता और क्या हो सकती है?

प्रश्न—विना जाने बूझे पाप होजाय तो उसका प्रायश्चित्त हो सकता है परन्तु जान बूझ कर भ्रष्ट हो जाने वाले के लिये प्रायश्चित्त कैसे होगा? इस पर मनु कहते हैः—

अकामतः कृते पापे प्रायश्चित्तं विदुर्बुधाः।
कामकार कृतेऽप्याहुरेके श्रुतिनिदर्शनात्॥ ११—४५॥

बिना इच्छा के, अथवा अज्ञान में पाप हो जाय तो उसका प्रायश्चित्त पण्डितों ने बतलाया है और वेदों के प्रमाणसे अनेक आचार्य कहते हैं कि जान बूझ कर पतित हो जानेवाले की भी शुद्धि विहित है। इसमें कुल्लूकभट्ट इस श्लोक की टीका में श्रुति का प्रमाण देकर लिखते हैं—

"इन्द्रो यतीन् सालावृकेभ्यः प्रायच्छत्तमश्लीला बागेत्याव-दत्सप्रजापतिमुपाधावत्तस्मात्तमुपहव्यं प्रायच्छत् इति॥ अस्यार्थः। इन्द्रो यतीन् बुद्धिपूर्वकं श्वभ्यो दत्तवान् स प्रायश्चित्तार्थं

शुद्धि के प्रमाण

प्रजापतिसमीपमगमत् तस्मै प्रजापति रुपहव्याख्यं कर्म प्रायश्चित्तं दत्तवान् अतः कामकारकृतेऽपि प्रायश्चित्तम् ॥

इन्द्रने जान बूझकर बुद्धिपूर्वक यतियों को कुत्तोंको दे दिया। वह प्रायश्चित्त के लिये प्रजापति के पास गया। प्रजापति ने उसे उपहव्य नामक कर्मद्वारा प्रायश्चित्त दिया। इसलिये बुद्धि-पूर्वक भ्रष्ट हो जाने वाले के लिये प्रायश्चित्त है।

इस प्रमाण से विदित हो गया होगा कि प्रायश्चित्त सबका हो सकता है चाहे व्रात्य हो चाहे जान बूझकर मुसलमान ईसाई का जलपान किया हो चाहे गोमांसादि आदि खालिया हो, चाहे कोई भी निन्दित कर्म किया हो, प्रायश्चित्त सबका हो सकता है।

अकामतः कृतं पापं वेदाभ्यासेन शुध्यति ।
कामतस्तु कृतं मोहात्प्रायश्चित्तैः पृथग्विधैः ॥ ११-४६ ॥

अनजान में या बिना इच्छा से बलात्कार पूर्वक किसी ने पाप किया हो तो केवल वेदाभ्यास से वह शुद्ध हो जाता है और जान बूझकर अथवा मूर्खता से भ्रष्ट हो गया हो तो भिन्न भिन्न प्राय- श्चितों के द्वारा शुद्ध होता है।

आगे मनुने अ० ११ श्लो० ५४ से ६६ तक पातकियों और उपपातकियों का नाम गिनाकर सबको प्रायश्चित्ती ठहराया है आप लोग पढ़कर विचार करें कि आजकल कितने लोग प्रायश्चित्ती ठहरते हैं:—

ब्रह्महत्या तथा इसी के समान अपने उत्कर्षके लिये झूठ बोलना, किसीको हानि पहुंचाने के लिये राजदरबार में चुगुलखोरी करना, गुरु के ऊपर झूठा दोष लगाना, सुरापान, वेद

का त्याग करना वेदनिन्दा, झूठी गवाही देना, मित्रका वध, निन्दित न भक्षण करने योग्य पदार्थोंका खाना, चोरीकरना किसी धरोहर का हजम कर जाना अपनी भगिनी, कुमारी अन्त्यज मित्र पुत्रकी भार्या से समागम करना ये सब महा-पातक हैं। अब उपपातक का नाम सुनिये

गोवध, भ्रष्ट पुरुषोंको यज्ञ कराना, दूसरे की पत्नी से समागम, माता पिता गुरु आदि की सेवा न करना इन्हें त्याग देना, श्रौत स्मार्त कर्मों का त्याग, पुत्रादि का पालन पोषण न करना,सूदलेना, ब्रह्मचारीका मैथुन करना, तडाग, बाग,भार्या, सन्तान का विक्रय, व्रात्यता, भाई बन्धुओं की रोजी छीन लेना, प्रतिनियत वेतन लेकर वेदादि पढ़ाना, प्रतिनियतवेतन प्रदानपूर्वक पढ़ना, अविक्रेय तिलादिका बेचना, औषधियोंको उजाड़ देना, स्त्री के द्वारा जीविका चलानेवाला, मारण मोहन बशीकरण आदि उपचार करना, भ्रूणहत्या नृत्यगीतवादित्रोप-सेवन, धान तामा लोहा आदि का चुराना, इत्यादि अनेक, उपपातक हैं। इसे पढ़ कर विचार करो कि इस काल में इनसे कौन बचा है? क्या ऐसे लोगों का प्रायश्चित्त होता है? इसके पश्चात् उक्त सब पातकियों की शुद्धि लिखी है। मनुस्मृति पढ़कर देखलो। कुछ यहां पर लिख दिया जाता है। आज कल शराब मांस का बाजार गर्म है। द्विज वर्ण (ब्राह्मण क्षत्रिय-वैश्य) दिनों दिन भ्रष्ट होते जारहे हैं, अतः इसपर भी प्रकाश डाल देना आवश्यक है।

सुरावै मलमन्नानां पाप्मा च मलमुच्यते
तस्माद् ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्च न सुरां पिबेत् ११—९३

सुरा अन्नों का मल है और मल कहते हैं पाप को।

इसलिये ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शराब न पीवें।

यक्ष रक्षः पिशाचान्नं मद्यं मांसं सुरासवम्।
तद्ब्राह्मणेन नात्तव्यं देवानामश्नता हविः॥

मद्य, मांस, सुरा ताड़ी आदि यक्ष राक्षस पिशाचों का भोजन है। देवताओं की हविखाने वाले ब्राह्मणों को कभी न खाना चाहिये।

यदि ऐसा करे तो कौनसा प्रायश्चित्त करे?

सुरां पीत्वा द्विजो मोहादग्निवर्णां सुरां पिबेत्
तया च काये निर्दग्धे मुच्यते किल्विषात्ततः

जो द्विज शराब पी ले वह खूब तपा हुआ शराब पीकर अपने शरीर को जला दे तब वह पाप से छूटता है।

× + × +

ब्राह्मणस्य रुजः कृत्वा घ्रातिरघ्रेयमद्ययोः।
जैह्मं च मैथुनं पुंसि जातिभ्रंशकरं स्मृतम्॥

ब्राह्मण को पीड़ा पहुँचाना, अत्यंत दुर्गन्धयुक्त अघ्रेय लशुन या मद्यके गन्ध को सूंघना बेइमानी, पुरुषमैथुन (लवण्डेबाज़ी) इत्यादि कार्यों सेजाति च्युत होता है।

जाति भ्रंशकरं कर्म कृत्वान्यतमिच्छया।
चरेत्सांतपनं कृच्छ्रं प्राजापत्यमनिच्छया
॥ ११। १२४॥

इन जातिच्युत करने वाले कर्मों में से किसी भी कर्म को करके सांतपन व्रत करे तब शुद्ध हो।

परन्तु आजकल ऊपर बतलाये हुये पातक, महापातक उपपातक के करनेवाले जातिच्युत नहीं किये जाते। ब्रह्महत्या या मनुष्यहत्या अथवा पुरुष मैथुनके लिये तो सरकारसे दण्ड का विधान है परन्तु और किसीभी पातकके लिये दण्ड नहीं होता।

वेसेही लोग जो स्वयं शास्त्र की बात न तो जानते और न तो मानते किन्तु सनातनधर्म की दोहाई देकर शुद्धि में टांग अड़ाते हैं।

× × × ×

अब ऐसी ऐसी बातों को विस्तार भय से छोड़ कर इस लेख में उन्हीं पातकों तथा उतपातकों की शुद्धि का वर्णन करेंगे जिनके लिये प्रायः आजकल विवाद खड़ा हुआ है।

देवलस्मृति

अपेयंयेन सम्पीतमभक्ष्यं चापि भक्षितम्।
म्लेच्छैर्नीतेन विप्रेण अगम्यागमनं कृतम् ॥७॥
तस्यशुद्धिप्रवक्ष्यामि यावदेकंतु वत्सरम्।
चान्द्रायणं तु विप्रस्य सपराकं प्रकीर्तितम् ॥८॥
पराकमेकं क्षत्रस्य पादकृच्छ्रेण संयुतम्।
पराकार्धं तुवैश्यस्य शूद्रस्यदिनपंचकम् ॥ ९ ॥

किसी ब्राह्मण या क्षत्रिय या वैश्य या शूद्रको म्लेच्छों का संसर्ग हो गया हो और संसर्ग होनेसे उसने अपेयपान कियाहो, गोमाँसादिक अभक्ष्यपदार्थ खालिया हो तो उसकी शुद्धि निम्न-लिखित व्रतसे होगी। ब्राह्मणसाल भरतक सपराक चान्द्रायण व्रत करे चौथाई कृच्छ्र व्रतके साथ एक पराकव्रत क्षत्रिय करे वैश्य पराक का आधा और शूद्र ५ दिनका पराक करे।

अथ संवत्सरादूर्ध्वं म्लेच्छैर्नीतो यदा भवेत्
प्रायश्चित्ते तु संचीर्णे गंगास्नेन शुध्यति ॥१५॥

यदि म्लेच्छलोग साल भरसे अधिक उसे अपने यहां रखे रहे हों तो प्रायश्चित्त करने और गंगा स्नान से शुद्ध हो जाता है।

बलाद्दासीकृता येच म्लेच्छचाण्डालदस्युभिः।

अशुभं करिताः कर्म गवादिप्राणिहिंसनम् ॥१७॥
उच्छिष्टमार्जनं चैव तथा तस्यैव भोजनम् ।
खरोष्ट्र विड्वराहाणामामिषस्य च भक्षणम् १८॥
तत्स्त्रीणांच तथा संगं ताभिश्चसह भोजनम् ।
मासोषिते द्विजातौतु प्राजापत्यं विशोधनम्१९॥

म्लेच्छों चाण्डालों अथवा दस्युओं ने जिन्हे बलात्कार से दास बना लिया हो, गोमांस भक्षण आदि अशुभकर्म जिनसे करवाया हो, जिसने उनका जूंठा वर्तन माजा हो और उनका जूंठा खाया हो, उनकी स्त्री के साथ मैथुन किया हो, उनके साथ बैठकर खाया हो, तो प्राजापत्य व्रत से वह शुद्ध हो जाता है ।

म्लेच्छान्नं म्लेच्छ संस्पर्शो म्लेच्छेन सह संस्थितिः
वत्सरं वत्सरादूर्ध्वं त्रिरात्रेण विशुध्यति ॥ ४४ ॥

साल भर या साल भर के ऊपर म्लेच्छका अन्न खाकर, म्लेच्छका संस्पर्श करके अथवा म्लेच्छ के साथ रहकर पंचगव्यसे तीन रात में शुद्ध हो जाता है ।

म्लेच्छै हृतानां चौरैर्वा कान्तारेषु प्रवासिनाम् ।
भुक्त्वाभक्ष्यमभक्ष्यं वा क्षुधार्तेन भयेन वा॥४५॥
पुनः प्राप्त स्वकं देशं चातुर्वर्ण्यस्य निष्कृतिः ।
कृच्छ्रमेकंचरे द्विप्रस्तदर्धं क्षत्रिय श्चरेत् ॥
पादोनंचचरे द्वैश्यः शूद्रः पादेन शुध्यति ॥४६॥

कान्तारों में रहने वाले म्लेच्छों वा चोरों से छीना हुआ पुरुष उनके साथ भक्ष्य अथवा अभक्ष्य भूख वा भयसे खा लेवे तो अपने देशमें लौटने पर उसकी शुद्धि होती है । विप्र एक कृच्छ्व्रत, क्षत्रिय उसका आधा, वैश्य पादोन तथा शूद्र पाद (चौथाई) व्रत करे ।

गृहीतो यो बलान्म्लेच्छैः पंचषट् सप्तवासमाः ।
दशादिविंशतिं यावत्तस्य शुद्धिर्विधीयते ॥५३॥
प्राजापत्यद्वयं तस्य शुद्धिरेषा विधीयते ।
अतःपरं नास्ति शुद्धिः कृच्छ्रमेव सहोषिते ॥५४॥
म्लेच्छैः सहोषितो यस्तु पंचप्रभृतिविंशतिम् ।
बर्षाणि शुद्धिरेषोक्ता तस्य चान्द्रायण द्वयम् ५५

यदि म्लेच्छोंने बलात्कार से पकड़ कर अपने पास पांच छः सात दश वा २० वर्ष तक रख छोड़ा हो तो उसकी शुद्धि दो प्राजापत्यव्रत करनेसे होती है। म्लेच्छों के साथ जो ५ से लेकर बीस वर्ष तक रह गया हो तो दो चान्द्रायण व्रत करने से उसकी शुद्धि हो जाती है ।

* स्त्री शुद्धि *

गृहीता स्त्री बलादेव म्लेच्छै र्गुर्वी कृतायदि ।
गुर्वीन शुद्धिमाप्नाति त्रिरात्रेणोत्तरा शुचिः ॥ ४७ ॥
योषागर्भं विधत्ते या म्लेच्छात्कामादकामतः ।
ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या शूद्रा वर्णेतराच या ॥ ४८ ॥
अभक्ष्यभक्षणं कुर्यात्तस्याः शुद्धिःकथं भवेत् ।
कृच्छ्रसंतापनं शुद्धिर्घृतैर्योनेश्च पाचनम् ॥४९॥
असवर्णेन योगर्भः स्त्रीणां योनौ निषिच्यते ।
अशुद्धासाभवेन्नारीयावच्छल्यं न मुञ्चति ॥ ५० ॥
विनिःसृते ततः शल्ये रजसो वापि दर्शने ।
तदा सा शुध्यते नारी विमलं कांचनं तथा ॥ ५१ ॥

यदि कोई स्त्री म्लेच्छ द्वारा बलात्कार गर्भवती करदी गई हो तो वह गर्भ रहित होने पर शुद्ध हो जाती है। जो स्त्री म्लेच्छ से अपनी इच्छा अथवा अनिच्छा से गर्भ धारण करे

और गोमाँसादि अभक्ष्य भक्षण करे तो वह कृच्छ्र संतापन व्रत से शुद्ध हो जाती है लेकिन वह तब तक अशुद्ध रहती है जब तक पेट में गर्भ है गर्भ के निकल जाने पर अथवा पुनः रेत दर्शन हो जाने पर वह तपाये हुये सुवर्ण के समान शुद्ध हो जाती है !

यही बात अत्रिसंतिहामें लिखी है:—

······स्त्रिया म्लेच्छस्य संपर्काच्छुद्धि सांतपने तथा ।
तप्तकृच्छ्रं पुनः कृत्वा शुद्धिरेषाभिधीयते ॥
सवर्तंत यथा भार्यां गत्वा म्लेच्छस्य संगताम् ॥१८४॥
सचैलं स्नान मादाय घृतस्य प्राशनेनच ।
स्नात्वा नद्युदकै श्चैव घृतं प्राश्य विशुध्यवि ॥ १८५ ॥
संगृहीतामपत्यार्थमन्यैरपितथा पुनः ।
चाण्डालम्लेच्छश्वपचकपालव्रतधारिणः ॥ १८६ ॥
अकामतः स्त्रियो गत्वा पराकेण विशुध्यति ।
कामतस्तु प्रसूतोवा तत्समो नात्रसंशय ॥ १८७ ॥
असवर्णैस्तुयो गर्भः स्त्रीणां योनौ निषिच्यते ।
अशुद्धासा भवेन्नारी यावद्गर्भं न मुञ्चति ॥ १९५ ॥
विमुक्ते तुततः शैल्ये रजश्चापि प्रदृश्यते ।
तदा सा शुध्यतेनारी विमलंकांचनं यथा ॥ १९५ ॥
स्वयं विप्रतिपन्ना या यदिवा विप्रतारिता ।
बलान्नारी प्रभुक्तावा चैारभुक्ता तथापिवा ॥ १९८ ॥
सकृत्भुक्ता तुयानारी म्लेच्छैर्या पापकर्मभिः ।
प्राजापत्येन शुध्येत ऋतु प्रस्रवणेन तु ॥ २०१ ॥
बलाद्भिता स्वंयं वापि पर प्रेरितया यदि ।
सकृद्भुक्ता तु या नारी प्राजापत्येन शुध्यति ॥२०॥

यही बात अत्रिस्मृति में है।

पचमोऽध्यायः ।

न स्त्री दुष्यति जारेण न विप्रो वेदपारगः ।
नापो मूत्रपुरीषेण नाग्निर्दहनकर्मणा ॥ १ ॥
वलात्कारोपभुक्ता वा चौरहस्तगतापिवा ।
स्वयंचापि विपन्ना या यदिवा विप्रवादिता ॥ २ ॥
नत्याज्या दूषिता नारी नास्यास्त्यागो विधीयते ।
पुष्पकाल मुपासीत्वा ऋतुकालेन शुध्यति ॥ ३ ॥
स्त्रियः पवित्रमतुलंनैता दुष्यन्तिकेनचित् ।
मासि मासि रजो ह्यासां दुष्कृतान्यपकर्षति ॥ ४ ॥
पूर्वं स्त्रियः सुरै र्भुक्ताः सोमगन्धर्ववह्निभिः ।
भुज्यन्ते मानुषैः पश्चान्नैता दुष्यन्ति कर्हिचित् ॥

स्त्री स्वयं चली गई हो या छली गई हो या वलात्कार से भोगी गई हो तो ऐसी दूषित स्त्री को भी नहीं छोड़ना चाहिये। ऋतु काल तक ठहर जाय, ऋतु दर्शन होने पर स्वयं शुद्ध हो जाती है। जो स्त्री पापी म्लेच्छों से एक बार भोगी गई हो, वह प्राजापत्यव्रत से तथा रजोदर्शन से शुद्ध हो जाती है। स्त्री वेदपारग ब्राह्मण, जल और अग्नि ये दूषित नहीं होते।.........

धर्मस्य ब्राह्मणो मूलमग्रं राजन्य उच्यते ।
तस्मात्समागमे तेषामेनो विख्याप्य शुध्यति ॥ ८३ ॥
तेषां वेदविदो ब्रूयुस्त्रयोप्येनः सुनिष्कृतिम् ।
सातेषां पावनायस्यात् पवित्रा विदुषांहिवाक् ॥ ८४ ॥

मनु ११ अ०

ब्राह्मण धर्म का मूल हैं और राजा अगुवा है। इसलिये

उनके समागममें अपने पाप का निवेदन कर प्रायश्चित्त शुद्ध हो जाता है। तीन वेदवेत्ता विद्वान् जिस पाप के लिये जो प्रायश्चित्त नियत करें उसी से पापी की शुद्धि हो जाती है क्योंकि विद्वानों की वाणी ही पवित्र होती है।

❋ गायत्री से शुद्धि ❋

शतं जप्त्वा तुसा देवी दिनपापप्रणाशिनी।
तथा सहस्रं जप्त्वातु पातकेभ्यः समुद्धरेत् ॥ १५ ॥
दशसहस्रं जप्त्वातु सर्वकल्मषनाशिनी।
सुवर्णस्तेयकृद्विप्रो ब्रह्महा गुरुतल्पगः ॥ १६ ॥
सुरापश्च विशुध्येत लक्षजाप्यान्न संशयः।

(शंख १२)

सौबार गायत्री जपने से दिन भर का पाप, हजार बार जपने से पापों से उद्धार कर देती है। दश हजार जप से सर्व पाप का नाश, लाख जाप से सुरापी विशुद्ध हो जाता है।

महापातकसंयुक्तो लक्षहोमं तु कारयेत्।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो गायत्र्या चैव पावितः ॥ २१ ॥

महापातकी लाख होम करके सब पापों से छूट जाता है।

अभ्यसेत् तथा पुण्यां गायत्रीं वेद मातरम्।
गत्वाऽरण्ये नदीतीरे सर्वपापविशुद्धये ॥

पवित्र गायत्री का अभ्यास करे, बन में नदी के किनारे जाकर सब पापों की शुद्धि के लिये ॥ अहन्यहनियोधीते गायत्रीद्विजोत्तमः। मासेन मुच्यते पापादुरगः कंचुकाद्यथा ॥ जो गायत्री को प्रति दिन जपता है वह महीने भर में पाप से ऐसे छूट जाता है जैसे सांप केंचुली से।

ऐहिकामुष्मिकं पापं सर्बं निरवशेषतः।

पंचरात्रेणगायत्रीं जपमानो व्यपोहति ॥ सं० २१७ ॥

पांच रात तक गायत्री-का जाप करता हुआ पुरुष इस जन्म और अन्यजन्म के सब पापों को नाश कर देता है।

गायत्र्यास्तु परं नास्ति शोधनं पापकर्मणाम्।
महाव्याहृतिसंयुक्तां प्रणवेन च संजपेत् ॥ २१८ ॥

गायत्री से बढ़कर पापियों का शोधक कोई नहीं ? महाव्याहृति और प्रणव के साथ गायत्री का जप करे।

अयाज्ययाजनं कृत्वा भुक्त्वा चान्नं विगर्हितम्।
गायत्र्यष्ट सहस्रं तु जपं कृत्वा विशुध्यति ॥२२०॥

अयोग्य को यज्ञ कराकर और निन्दित अन्न खाकर आठ हजार गायत्री का जप करके शुद्ध हो जाता है।

प्राणायाम से शुद्धिः।

(अत्रिस्मृति द्वि० अ०)

प्राणायामांश्चरेत्त्रीं स्तु यथाकालमतन्द्रितः।
अहोरात्रकृतंपापं तत्क्षणादेवनश्यति ॥ १ ॥
कर्मणा मनसा वाचा यद्रात्रौ क्रियते त्वघम्।
संतिष्ठन् पूर्व संध्यायां प्राणायामैस्तु पूयते ॥ २ ॥
कर्मणा मनसा वाचा यदह्रा कुरुते त्त्रघम्।
आसीनः पश्चिमां संध्यां प्राणायामैस्तु शुध्यति ॥ ३ ॥
प्राणायामैर्य आत्मानं नियम्यास्ते पुनः पुनः।
दशद्वादशभिर्वापि चतुर्विंशात्परंतपः ॥ ४ ॥

यदि यथाकाल तन्द्रा रहित होकर तीन प्राणातान करे तो रात दिनका किया हुआ पाप उसी क्षण नाश हो जाता है। कर्म मन और वाणी से रात में जो पाप होता है वह प्रातःकाल की संध्या में प्राणायामद्वारा नष्ट हो जाता है इसी

प्रकार सायंकाल की संध्या में दिन का किया पाप प्राणायाम द्वारा नाश हो जाता है।

मनोवाक्कायजं दोषं प्राणायामैर्दहेद्द्विजः।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु प्राणायामपरो भवेत्॥
गरुड़पुराण अ० ३६

द्विजमानसिक वाचिक कायिक दोषोंको प्राणायाम से भस्म करे।

मानसं वाचिकं पापं कायेनैवचयत्कृतम्।
तत्सर्वंनाशमायाति प्राणायामप्रभावतः॥ २५॥

मानसिक वाचिक कायिक सब पाप प्राणयाम के प्रभाव से नाश हो जाते हैं। सम्वर्त

सव्याहृतिप्रणवका प्राणायामस्तुषोडशः।
अपि भ्रूणहणं मासात्पुनन्त्यहरहः कृताः॥

ओंकार और व्याहृति के साथ प्रतिदिन किये हुए प्राणायाम एक मास में भ्रूण हत्यावालों को पवित्र कर देते हैं।

बौधायन स्मृति, तृतीयप्रश्न पंचमोऽध्यायः।

अथातः पवित्रापवित्रस्याघमर्षणस्य कल्पं व्याख्या स्यामः॥ १॥ तीर्थं गत्वा स्नातः शुचिवासा उदकान्ते स्थण्डिलमुद्धृत्य सकृत्क्लिन्नेन वाससा सकृत्पूर्णेनपाणिना आदित्याभिमुखोऽघमर्षणं स्वाध्यायमधीयीत॥२॥ प्रातः शतं मध्याह्ने शतमपरान्हे शतमपरमितंवा॥ ३॥ उदितेषुनक्षत्रेषु प्रसृत यावकं प्राश्नीयात॥ ४॥

ज्ञानकृतेभ्योऽज्ञानकृतेभ्यश्चोपपातकेभ्यः सप्त रात्रात् प्रमुच्यते॥ ५॥ द्वादशरात्राद्भ्रूणहननं गुरुतल्पगमनं सुवर्णं स्तैन्यं सुरापानमितिच वर्जयित्वैकविंशतिरात्राात्तानि अपि

तरति तान्यपि जयति ॥ ६ ॥ सर्वं तरति सर्वं जयति सर्वक्रतु फलमवाप्नोति सर्वेषुतीर्थेषु स्नातो भवति सर्वेषु वेदेषु चीर्ण-व्रतो भवति सर्वैं दैवै र्ज्ञातोभवत्याचक्षुषः पंक्तिं पुनाति कर्माणिचास्य सिध्यन्तीति बौधायनः ॥

भावार्थ—तीर्थ में जाकर उज्वल वस्त्र धारण करके जलके पास सूर्यकी ओर मुखकरके अघमर्षणका जाप करे। सवेरे १०० दोपहर बाद १०० दोप हर को १०० वार जप करे और नक्षत्रों के उदय होनेपर पसर भर जवकी लपसी खावे। इसप्रकार सात दिन तक करनेसे जान अनजानमें किये सब पातक नाश हो जाते हैं।

बृहद्यम स्मृति पंचमोऽध्यायः ५, ६, श्लोक

कार्यं चैव विशेषेण त्रिभिर्वर्णै रतन्द्रितः।
बलादासी कृतायेच म्लेच्छ चाण्डाल दस्युभिः॥
अशुभं कारिता कर्म गवादि प्राणिहिंसनम्
प्रायश्चित्तं च दात्तव्यं तारतम्येनवाद्विजैः॥

जो म्लेच्छ चाण्डाल दस्यु आदिकों से दास बना लिये गये हों, उनसे अशुभ कर्म कराया गया हो, गौं आदि की हिंसा करवादी गई हो तो द्विजोंको चाहिये कि तारतम्यसे इसका प्रायश्चित्त देवे। इससे भी सिद्ध है कि म्लेच्छादि से भ्रष्ट किया हुआ आर्य फिर शुद्ध किया जा सकता है।

लघु शातातपस्मृतिमें शरीरशोधन के लिये।

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधिसर्पिः कुशोदकम् ॥
निर्दिष्टं पंचगव्यं च पवित्रं कायशोधनम्।
गोमूत्रैकपलं दद्यादर्द्धांगुष्ठेन गोमयम् ॥
क्षीरं सप्तपलं दद्यात् पलमेकं कुशोदकम्।

गायत्र्या गृह्य गोमूत्रं गन्ध द्वारेति गोमयम् ॥
आप्यायस्वेति च क्षीरं दधिक्राव्यो तिवैदधि ॥
तेजोऽसिशुक्रामित्याज्यं देवस्यत्वा! कुशोदकम् ।
ब्रह्मकूर्चं भवेदेवमापो हिष्ठेति ऋग्जपेत् ॥
मध्यमेन पलाशेन पद्मपत्रेण वा पिबेत् ।
अथवा ताम्रपात्रेण ब्रह्मपात्रेण वा द्विजः ॥१६२॥
अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहा इरावती इ दं विष्णु; ।
मानस्तोके गायत्रीं च जुहुयात् ॥ १६३ ॥
आहृत्य प्रणवेनैव उद्धृत्य प्रणवेन च ।
आलोड्य प्रणवेनैव पिबेच्च प्रणवेन च ॥
एतद् द्विजनिमित्तांहि, सर्वपापप्रणाशनम् ॥
मलं कोष्ठगतं सर्वं दहत्यग्निरिवेन्धनम् ॥

गोमूत्र गोबर, दूध दही घी कुशोदक इन पांच पदार्थों का नाम पंचगव्य है इन सब पदार्थों को ऊपर बतलाये हुये वेद-मंत्रों द्वारा लेकर पान करने से द्विजातियों का सब पाप नाश हो जाता है। और अग्नि इन्धनको जैसे जला देती है ऐसे ही यह शरीर के सब दोषों को भस्मकर देता है। इसका माहात्म्य तो इतना बड़ा है कि वसिष्ठ जी इससे चाण्डालकी भी शुद्धि बतलाते हैं:—

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् ।
एक रात्रोपवासश्च श्वपाकमपिशोधयेत्२७-१३

* स्कन्द पुराण *

विशुद्धिं याचमानस्य यदि यच्छन्तिनो द्विजाः। कामाद्वा यदि वा क्रोधात् प्रद्वेषात् प्रच्युते भयात् ॥ ब्रह्महत्योद्भवंपापं सर्वेषां तत्र जायते। तस्माद् भ्यागतो यस्तु दूरादपि विशेषतः।

तस्य शुद्धिः प्रदातव्या प्रयत्नेन द्विजोत्तमैः ॥

अर्थ—जो कोई अपनी शुद्धि चाहता हो और ब्राह्मण लोग काम वा क्रोध वा द्वेष या पतित होने के भयसे नहीं देते हैं तो उन लोगों को ब्रह्महत्या का पाप लगता है। इसलिये जो कोई शुद्धि के लिये आवे,—विशेषतः दूर से—तो श्रेष्ठ ब्राह्मणों को उचित है कि उनकी शुद्धि की व्यवस्था दे देवें।

पद्मपुराणगणिकाकीशुद्धिब्रह्मखण्ड अ०६

एक गणिका थी वह एकबार किसी देवालय में चली गई वहां पान खाने के बाद चूने को भीत पर उसने पोत दिया जिसके प्रभाव से वह सम्पूर्ण पापों से मुक्त होकर मरने के बाद वैकुण्ठ को चली गई!

चित्रगुप्त धर्मराज से कहते हैं—

तथा पापानि अर्जितानि जन्मतः सुबहून्यपि।
किन्त्वा कर्णयलोकेश यदस्याः पुण्यमस्ति तत् ॥ ३० ॥
गणिकैकदाधर्मराज सर्वालंकारभूषिता।
कांचित्पुरीं जगामाशु जारकांक्षी धनार्थिनी ॥ ३१ ॥
तत्र देवालये तस्मिन् स्थिता ताम्बूलभक्षणम्।
कृत्वा तच्छेषचूर्णं तु ददौ भित्तौ तुकौतुकात् ॥ ३२॥
तेन पुण्यप्रभावेण गणिका गतपातका।
वैकुण्ठं प्रति सायाति निर्गता तव दण्डतः॥ ३३ ॥
भक्त्या यो वै हरेर्गेहे दद्याच्चूर्णं प्रयत्नतः।
पुण्यं किंवा भवेत्तस्य न जाने द्विजपुंगव ॥ ३६ ॥

अर्थ इसने बहुत जन्मों से बड़ा पाप किया था एक दिन यह धनकी इच्छा से जार को खोजती हुई किसी पुरी में गई। वहां के देवालय में ठहरी और पान खाकर चूना

दीवाल में लगा दिया। बस इससे उसका सब पातक नष्ट होगया। और वह यमदण्ड से मुक्त होकर बैकुण्ठ की अधिकारिणी बन गई। जब पान का चूना जरासा दीवालमें पोत देने या मन्दिर के द्वारपर कीचड़ लगा देनेसे सब पाप से छुटकारा हो गया और अन्त में बैकुण्ठ मिला तो यवनादिकों का शुद्ध होजाना कौनसी बड़ी बात है। इन कथाओं पर जिनका विश्वास हैं वे शुद्धि से कदापि इनकार नहीं कर सकते। पान खाकर जरासा चूना दीवाल की भीतपर लगा दो या पैरका कीचड़ द्वारपर लगा दो बस सब पापकी निवृत्ति !! फिर यवन ईसाई बेचारों की क्या कथा ?

पद्मपुराण ब्रह्मखण्ड अ० २

विष्णु मन्दिर के लीपने से सब ही पापों की निवृत्ति-पूर्वकाल में द्वापर में दण्डक नाम का चोर जो ब्रह्मस्वहारी मित्रघ्न असत्यभाषी क्रूर परदारगामी गोमांसाशी शराबी पाखण्डी द्विजातियों का वृत्तिच्छेदी न्यासापहारक शरणागत-हन्ता वेश्याविभ्रमलोलुप था विष्णु के मन्दिरमें धनचुराने गया। पैर में लगे हुए कीचड़ को देवगृह में पोंछ दिया जिससे कुछ भूमि लिप्त होगई। मन्दिरमें घुस कर, विष्णु का पीताम्बर लेकर, उसमें सब माल बाँधकर जानेको तैयार हुआ कि विष्णु की माया से गठरी हाथ से गिर गई और उसके शब्द से लोग जाग उठे वह डरसे भागा। उसे साँपने काट खाया और वह मरगया तब यमदूत उसे पकड़ कर ले चले। तब धर्मराज के पूछने पर चित्रगुप्त ने कहाः—

हरणार्थं हरे द्रव्यं गतोऽसौ पापिनां वरः।
प्रोज्झितः कर्दमो राजन् पादयो र्द्वारतः हरेः ३८

बभूव लिप्तासा भूमिः विलच्छिद्रविवर्जिता।
तेनपुण्य प्रभावेन निर्गतं पातकं महत्।
बैकुण्ठं प्रति योग्योऽसौ निर्गतस्तव दण्डतः२६
सृष्टानि यानि पापानि विधात्रा पृथिवी तले
कृतान्यनेन मूढेन सत्यमेतन्मयोदितम् ॥ २७ ॥

संसार में ब्रह्माने जितने पाप बनाये हैं उनसब पापों को इसने किया है यह मैं तुमसे सत्य कहता हूं परन्तु विष्णुका द्रव्य हरण करने के लिये यह गया और पैर में लगे हुए कीचड़ को विष्णु मन्दिर के द्वारपर पोंछ दिया जिससे विल और छिद्र मुंद गया। उस पुण्य के प्रभाव से इसका सब पातक नाश हो गया अब यह आपके दण्ड से बाहर है और बैकुण्ठ जाने के योग्य होगया!

श्रुत्वास वचनं तस्य पीठं कनकनिर्मितम्।
ददौ तस्मै चोपविष्टः तत्र पूज्यो यमेनच।

उसकी बात सुनकर यमने उसे सुवर्णनिर्मित आसन दिया। उस पर वह बैठा और यमने उसकी पूजा की।

पवित्रं मन्दिरं मेद्य पादयो स्तदधिरेणुभिः
कृतार्थोस्मि कृतार्थोस्मि कृतार्थोस्मिनसंशयः३१
इदानीं गच्छ भोः साधो हरेर्मंदिरमुत्तमम्।
नानाभोगसमायुक्तं जन्ममृत्युनिवारणम् ॥३२॥
इत्युक्त्वा धर्मराजोऽसौ स्यन्दने स्वर्ण निर्मिते
राजहंसयुते दिव्ये तमारोप्य गतैनसम् ॥ ३३ ॥
समस्त सुखदं स्थानं प्रेषयामास चक्रिणः।
एवं प्रविष्टो बैकुण्ठे तत्र तस्थौ चिरं सुखम् ३४
लेपनं ये प्रकुर्वन्ति भक्त्या तु हरिमन्दिरे।
तेषां किंवा भविष्यति न जाने हं द्विजोत्तम ३५

अर्थ—यमने कहा कि आज तुम्हारे चरण की धूलि से मेरा घर पवित्र हुआ। मैं कृतार्थ हो गया इसमें संशय नहीं है। हे साधो अब तुम विष्णुलोक को जाओ। यह कहकर धर्मराज ने सुवर्ण निर्मित रथपर चढा कर बिष्णु लोक को उसे भेज दिया। जब इस प्रकार अनजान में पैर पोंछ देने से ऐसा चोर वैकुण्ठ चला गया तो जो भक्ति के साथ हरि मन्दिर का लेपन करते हैं उनकी क्या गति होगी मैं नहीं कह सकता। पापकी निवृत्ति के लिये जिन सनातनियों के पास ऐसे ऐसे नुसख़े हैं, शुद्धिके नाम से क्यों नाक भौं चढ़ाते हैं।

पद्मपुराण ब्रह्मखण्ड अध्याय ७

राधाष्टमीव्रत से गोहत्यादि पातकोंकी निवृत्ति—एक बार एक लीलावती नाम की वेश्या किसी नगरमें गई और स्त्रियों को राधाकृष्ण के मन्दिर में राधा की पूजा करते हुये देखकर पूछा कि तुमलोग क्या कर रही हो तव व्रत रखने वाले बोले—

विश्वासघातजं चैव स्त्रीहत्याजनितं तथा।
एतानि नाशयत्याशु कृतायाश्चाष्टमीनृणाम् ॥३२॥
गोघातजनितंपापं स्तेयजं ब्रह्मघातजम्।
परस्त्रीहरणाच्चैव तथा च गुरुतल्पजम् ॥२२॥

गोहत्या चोरी भ्रूणहत्या परस्त्रीहरण गुरुस्त्री गमन विश्वासघात स्त्रीहत्या आदि से उत्पन्न पापको यह व्रत नाश करता है। यह सुनकर उसने राधाष्टमी का व्रत किया। उसके पाप छूट गये और वह मरने पर स्वर्गलोक को गई।

❀ वेद पाठ से द्विजातियों की शुद्धि ❀

ऋग्वेदमभ्यसेद्यस्तु यजुःशाखा मथापिवा।

सामानि सरहस्यानि सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥सं० २२५

जो ऋग्वेद का अभ्यास करे, अथवा यजुर्वेदका, अथवा सरहस्य सामवेद का अभ्यासकरे तो वह सब पापों से छूट जाता है।

पावमानीं तथा कौत्सीं पौरुषं सूक्तमेवच।
जप्त्वा पापैः प्रमुच्येतसपित्र्यं माधुच्छान्दसम् ॥सं० २२

पावमानी वा कौत्सी वा पुरुष सूक्त, वा सपित्र्यमाधुच्छान्दससूक्त को जपने से सब पाप छूट जाता है।

कौत्सं जप्त्वाप इत्येतत् वासिष्ठं च प्रतीत्यृचम्।
माहित्रं शुद्धवत्यश्च सुरापोपि विशुध्यति ॥
मनु० ११—२४६

कौत्सऋषिके "अप नः शोशुचदघम् ॥ इस सूक्तको, वसिष्ठ ऋषिके" प्रतिस्तोमेभि रुषसं वसिष्ठाः, इस ऋचाको, माहित्रीणामवोस्तु" इस सूक्तको, "शुद्धवत्यः एतोन्विन्द्रं स्तवाम शुद्धम्" इन तीन ऋचाओं को, महीने भरमेंप्रतिदिन १६ वार जपकर सुरापी भी शुद्ध हो जाता है।

सकृज्जप्त्वास्यवामीयं शिवसंकल्पमेवच।
अपहृत्य सुवर्णं तु क्षणाद्‌ भवति निर्मलः ॥ २५०

ब्राह्मण सुवर्ण चुराकर"अस्यवामस्य पलितस्य"इस सूक्तको शिवसंकल्प" यज्जाग्रतो दूरम्" इस मंत्रको प्रतिदिन एकबार महीने भर तक जपकर शुद्ध हो जाता है—

हविष्पान्तीयमभ्यस्य नतमंह इतीतिच।
जपित्वा पौरुषं सूक्तंमुच्यते गुरुतल्पगः ॥

हविष्पान्तमजरं स्वर्विदि, इन १६ ऋचाओं, "नतमंहोन दुरितम्" इन आठ ऋचाओं, शिव संकल्प, तथा पुरुष सूक्त इन सूक्तों को जपकर व्यभिचारी पापसे छूटता है।

एनसां स्थूल सूक्ष्माणां चिकीर्षन्नपनोदनम् ।
अवेत्यृचं जपेदब्दं यत्किंचेदमितीतिवा ॥२५२॥

स्थूल महापातकादि सूक्ष्म उपपातक आदिको नष्ट करनेकी इच्छा रखने वाला "अवते हेलो वरुण नमोभिः" इस ऋचाको; "यत्किचेदं वरुण नमोभिः ॥ इस ऋचाको, यत्किंचेदं वरुण दैव्ये जने" इस ऋचाको, "इतिवा इतिमे मनः" इस सूक्तको साल भर तक प्रतिदिन एकवार जपकरे ।

प्रतिगृह्या प्रतिग्राह्य भुक्त्वा चान्नं विगर्हितम् ।
जपंस्तरत्समन्दीयं पूयते मानव स्त्र्यहात् २५३

अप्रतिग्राह्य (महापातकियोंका धन) को ग्रहण करके और विगर्हित (मांस मदिरा, म्लेच्छादिका अन्न इत्यादि) अन्न को खाकर के "तरत्समन्दी धावति" इस ऋचाको तीन दिन तक चार वार जपकर उस पापसे मनुष्य पवित्र हो जाता है ॥

सोमा रौद्रेण तु वह्वेनामासमभ्यस्य शुध्यति ।
स्त्रवन्त्या माचरन् स्नानमर्यम्णा मितिचतृचम् ॥२५४ ॥

"सोमारुद्रा धारयेथामसुर्यम्" इत्यादि ४ऋचाओं "अर्यमणं वरुणं मित्र" इत्यादि तीन ऋचाओं को नदीमें स्नान करके एक महीने तक प्रत्येक का जप करके अनेक पाप वाला भी शुद्ध हो जाता है ।

मंत्रैः शाकलहोमीयै रब्दं हुत्वा घृतं द्विजः ।
सुगुर्वप्यपहन्त्येनो जप्त्वा व नम इत्यृचम् ॥॥ २५६ ॥

देवकृतस्य, इत्यादि शाकलहोममंत्रों से वर्ष भर तक घृतहोम करके " नम इन्द्रश्च" इस ऋचाको वर्ष भर जप कर द्विजाति महापातक को भी नाश कर डालता है ।

महापातक संयुक्तोऽनुगच्छेद्गाः समाहितः ।
अभ्यस्याब्दं पावमानीं भक्षाहारो विशुध्यति ॥॥ २५७ ॥

महापातकी, भिक्षा मांगकर खाता हुआ, गाय के पीछे पीछे वर्षभर तक सेवा करके पावमानी सूक्तको जपकर शुद्ध होजाता है ॥

ऋक्संहितां त्रिरभ्यस्य यजुषां वा समाहितः ।
साम्नांवा सरहस्यनां सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥२६६॥

ऋग्वेद वा यजुर्वेद वा साम वेदको तीन तीन वार अभ्यास करके द्विज सब पापों से छूट जाता है-

गंगा दर्शनासे शुद्धि ।

तीर्थ प्रत्याम्नाये विष्णुपुराणम् ।
यतोज्ञाऽज्ञानतोवापि भक्त्याभक्त्यापिवा कृतम्
गंगास्नानं सर्वविधं सर्वपापप्रणाशनम् ॥ १ ॥
चान्द्रायणसहस्रैस्तु यश्चरेत्कायशोधनम् ।
पिबेद्यश्चापि गंगाम्भः समौस्यातां न वासमौ ॥२॥
भवन्ति निर्विषाः सर्पा यथा तार्क्ष्यस्यदर्शनात् ।
गंगाया दर्शना त्तद्वत् सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

चाहे जानमें चाहे अनजानमें, चाहे भक्तिसे चाहे अभक्ति से, गंगा स्नान सब प्रकारके पापों को नाश कर देता है ।

सहस्रों चान्द्रायणव्रतसे जो शरीरको शुद्ध करता है यदि वह गंगाजल पीले तो वह चान्द्रायण सहस्र इसके बराबर होगा या नहीं, मैं नहीं कह सकता अर्थात् सहस्रों चान्द्रायण व्रतकी अपेक्षा गंगा जलसे तुरन्त शुद्धि होती है ॥

जैसे गरुड़ को देखकर सर्प विषहीन हो जाते हैं वैसे ही गंगाके दर्शन मात्रसे मनुष्य सब पापों से छूट जाता है—

❀ ❀ ❀ ❀

प्रयाग तीर्थ

मत्य पुराण अ० १०४

दर्शनात्तस्य तीर्थस्य नाम संकीर्तनात्तथा ।
मृत्तिकालम्भनाद्वापि नरः पापात्प्रमुच्यते १२

प्रयाग तीर्थके दर्शन, नाम कीर्तन तथा मिट्टी के छूनेसे नर पापोंसे छूट जाता है ॥

योजनानां सहस्रेषु गंगायाः स्मरणान्नरः ।
अपि दुष्कृतकर्मा तु लभते परमां गतिम् ॥१४॥

जो हजारों योजन से गंगाका स्मरण करता है वह कुकर्मी होने पर भी मोक्ष पाता है ।

गंगा गंगेतियो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि ।
मुच्यते सर्व पापेभ्यो विष्णुलोकं सगच्छति ॥

जो सैकड़ों योजन परसे गंगा का नाम ले तो सब पापों से छूटकर विष्णु लोकको प्राप्त होता है

भविष्य पुराण

स्नानमात्रेण गंगायाः पापंब्रह्मबधोद्भवम् ।
दुराधर्षं कथंयाति चिन्तयेद्योवदेदपि ॥ १ ॥
तस्याहं प्रवदे पापं ब्रह्मकोटिवधोद्भवम् ।
स्तुतिवाद्मिमं मत्त्वा कुम्भीपाकेषुजायते
आकल्पं नरकं भुक्त्वा ततो जायेत गर्दभः ॥

जो मनुष्य ऐसा कहता है कि गंगा स्नान से ब्रह्महत्यादि बड़े २ पापों का नाश कैसे हो सकता है उसको करोड़ों ब्रह्म हत्या का पाप होता है और जो लोग इन वचनों को अर्थवाद अर्थात् प्रशंसा मात्र कहते हैं वे लोग कुम्भीपाक नरक में जाते हैं और कल्प भर नरक में रहकर अन्त में गदहा होते हैं । इत्यादि वचनों से गंगास्नान व तीर्थगमन सब प्रकार के पापों को नष्ट करने वाला सिद्ध होता है यही बात बृहन्नारदीय पुराण में भी लिखी है ।

प्रायश्चित्तानियः कुर्यान्नारायण परायणः
तस्य पापानि नश्यन्ति अन्यथा पतितो भवेत्
यस्तु रागादि निर्मुक्तो ह्यनुतापसमन्वितः
सर्वभूतदयायुक्तः विष्णुस्मरणतत्परः
महापातकयुक्तो वा वाप्युपपातकैरपिः
सर्वैःप्रमुच्यते सद्यो यतो विष्णुरतं मनः ॥

जो मनुष्य भगवद् भक्त परायण होकर प्रायश्चित्त करता है उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं अन्यथा वह पतित होता है। जो मनुष्य राग इत्यादि से निर्मुक्त पश्चात्ताप करता हुआ सब भूतों पर दया कर विष्णु का स्मरण करता है वह बड़े २ पातकों तथा उपपातकों से मुक्त हो जाता है इन बचनों से विष्णभक्त मनुष्य मात्र का सब पाप नष्ट होता है यह बात सिद्ध होती है।

ब्राह्मण के चरणामृत से शुद्धिः।

नश्यन्ति सर्वपापानि द्विजहत्यादिकानिच।
कणमात्रं भजेद्यस्तु विप्रांघ्रिसलिलं नरः ॥९॥
योनरश्चरणौ धौतौकुर्याद्धस्तेन भक्तितः।
द्विजातेर्वच्मि सत्यंते समुक्तः सर्वपातकैः॥१०॥

प० पु० ब्र० ख० ४ अ० १४

जो ब्राह्मण के चरण के कणमात्रजल को ग्रहण करता है उसके ब्रह्महत्यादि सब पाप नाश हो जाते हैं। जो मनुष्य द्विज के दोनों चरणों को भक्ति पूर्वक धोवे तो मैं सत्य कहता हूं कि वह सब पातकों से मुक्त हो जाता है।

× × × × ×

❀ पश्चात्तापादि से शुद्धि ❀

(मनु० ११ अ०)

ख्यापनेनानुतापेन तपसाध्ययनेन वा ।
पापकृन्मुच्यते पापात्तथादानेन चापदि २२७

अपने पाप के कथन से, पश्चात्ताप से, तप से, अध्ययन से दान से पापी पाप से छूट जाता है।

यथा यथा नरोऽधर्मं स्वयं कृत्वानुभाषते ।
तथा तथा त्वचेवाहिस्तेना धर्मेण मुच्यते २२८

मनुष्य जैसे जैसे अपने किये हुये अधर्म को कहता जाता है तैसे २ वह उस अधर्म से छूटता जाता है जैसे सांप केंचुली से ।

यथा यथा मनस्तस्य दुष्कृतं कर्म गर्हति ।
तथा तथा शरीरं तत् तेनाधर्मेण मुच्यते २२९

जैसे जैसे उसका मन बुरे कर्मों से हटता जाता है वैसे वैसे उसका शरीर उस पाप से छूटता जाता है।

कृत्वापापं हिसंतप्य तस्मात्पापात्प्रमुच्यते ।
नैवं कुर्यां पुनरिति निवृत्या पूयते हिसः ॥

जो पाप करके पश्चात्ताप करता है वह उस पाप से छूट जाता है अर्थात् अब मैं फिर ऐसा न करूंगा, इस प्रकार प्रतिज्ञा करके उससे निवृत्त हो जाने पर पाप से छूट जाता है। शुद्धि को यहां तक सरल कर दिया कि अशक्तः प्रायश्चित्ते सर्वत्रानु शोचनेन शुद्धः (अत्रि, अ०७-१५)जो प्रायश्चित्त करने में अशक्त हो अर्थात् द्रव्यादि न व्यय कर सके या और व्रतादि न कर सके वह केवल पश्चात्ताप करने से जैसा कि मन का भाव है, पवित्र और शुद्ध हो जाता है।

❀ रामनाम से शुद्धि ❀

प्रायश्चित्तानि सर्वाणि तपः कर्मात्मकानिवै ।
यानि तेषामशेषाणां कृष्णानु स्मरणं परम् ॥
वि० पु अं० २ अ० ६

पराक आदि जितने भी प्रयश्चित्त करने के व्रत कहे गये हैं उन सभों से बढ़कर श्रीकृष्ण नाम का स्मरण है।

श्री राम राम रामेति ये वदन्त्यपि पापिनः ।
पाप कोटिसहस्रेभ्यस्तेषां संतरणं ध्रुवम् ॥ ग० पु०

जो पापी लोग राम राम कहते हैं वे करोडों पापों से मुक्त हो जाते हैं।

राम राम कहि जे जमुहाहीं ।
तिनहि न पाप पुंज समुहाहीं ॥
उलटे नाम जपत जग जाना ।
बाल्मीकि भये ब्रह्मसमाना ॥

श्वपच शवर खल यवन जड़ पामर कोल किरात ।
राम कहत पावन परम होत भुवन विख्यात ॥
पाई न केहि गति पतित पावन नाम भजि सुनु शठ मना ।
गणिका अजामिल गीध व्याध गजादि खल तारे घना ।
आभीर यवन किरात खल श्वपचादि अति अघरूपजे
कहि तेऽपि वारेक नाम पावन होहिं राम नमामिते

× × × ×

राम एक तापस तियतारी, नाम कोटि खल कुमति सुधारी ।

× × × ×

इत्यादि तुलसीकृत रामायण के प्रमाण हैं

किरात हूणान्ध्र पुलिन्द पुल्कसा आभीर कंकायवनाः

खसादयः । येऽन्येच पापा यदुपाश्रयाश्रयाच्छुध्यन्तितस्मैप्रम-विष्णवे नमः ॥

श्री मद्भागवत का यह श्लोक बतलाता है कि किरात हूण आन्ध्र पुलिन्द पुल्कस आभीर कंक यवन खस आदि महा पापी तथा और दूसरे महापापी जिस विष्णु के नामके आश्रय से शुद्ध हो जाते हैं उस विष्णुको नमस्कार है—

\+ + + +

❋ कृष्ण नाम से शुद्धि ❋

वृ० हा० अ० ६

विधानं कृष्णमंत्रस्य वक्ष्यामि शृणु पार्थिव ।
श्रीकृष्णाय नमो ह्येष मंत्रः सर्वार्थसाधकः ॥
कृष्णेति मंगलं नाम यस्यवाचि प्रवर्तते ।
भस्मी भवन्ति राजेन्द्र महापातककोटयः ॥
सकृत्कृष्णेति यो ब्रूयात् भक्त्यावापि चमानवः
पापकोटिविनिर्मुक्तो विष्णुलोकमवाप्नुयात् ॥
अश्वमेधसहस्राणि राजसूयशतानिच ।
भक्त्या कृष्णमनु जप्त्वा समाप्नोतिन संशयः ॥
गवांच कन्यकानां च ग्रामाणां चायुतानिच ।
गंगा गोदावरी कृष्णा यमुना च सरस्वती ॥२९९॥
कावेरीचन्द्रभागादि स्नानं कृष्णेति नो समम् ।
कृष्णेति पंचकृज्जप्त्वा सर्वतीर्थफलं लभेत् ॥३००॥
कोटिजन्मार्जितं पापं ज्ञानतोऽज्ञानतः कृतम् ।
भक्त्या कृष्णमनु जप्त्वा दह्यते तूल राशिवत् ३०१
अगस्यागमनात्पापादभक्ष्याणां च भक्षणात् ।
सकृत्कृष्णमनु जप्त्वा मुच्यते नात्र संशयः ॥३०२॥

भावार्थ—श्री कृष्णाय नमः यह मंत्र सब काम को सिद्ध

करने वाला है जो भक्ति से एक वार भी कृष्ण का नाम लेता है उसके करोड़ों पाप छूट जाते हैं और वह मुक्ति प्राप्त करता है। पांच वार कृष्ण का नाम ले ले तो सब तीर्थों में स्नान का फल मिलता है, अगम्या गमन से गोमांसादि अभक्ष्य भक्षण से जो पाप होता है वह एकबार कृष्ण का नाम लेने से छूट जाता है।क्या उक्त कथन सत्य नहीं है ? फिर शुद्धि में क्यों टांग अड़ाई जाती है।

रामनाम की कैसी महिमा है कि इसका जप करने वाला कैसाह्न नीच योनिका क्यों न हो शुद्ध होकर पवित्र हो जाता है। इसी रामनाम के प्रतापसे निताई और मिताई दो महात्माओं ने मिलकर बंगाल में कितने ही मुसलमानों को शुद्धकर वैष्णव बना डाला है। आजकल हिन्दुओं ने रूढ़ि को धर्म समझ रखा है। वे शास्त्र पुराणों को नहीं देखते इसलिये शास्त्रों और पुराणों में शुद्धि के इतने प्रमाण होते हुये भी ऐसे कमजोर बने बैठे हैं कि प्रति दिन अपने में से लोगोंको खोते चले जा रहे हैं। गंगा स्नान और दर्शन, से कैसाही पापी क्यों न हो पवित्र होकर विष्णु लोक का अधिकारी बन जाता है तो क्या नाम मात्रके ईसाई और मुसलमान गंगा में स्नान करने से शुद्ध नहीं हो सकते ?

फिर क्या कारण है कि आज कलके ब्राह्मण उक्त प्रमाणों के रहते हुये भी शुद्धि में टांग अड़ाते हैं और शुद्ध करनेवालों को गाली देते हैं। इसका कारण स्वयं पुराण ने ही बतला दिया है। ये सबके सब पाखण्डी हैं। देवी भागवत बतलाता है:—

कलावस्मिन्महाभागा नानाभेद समुत्थिताः।

नान्ये युगे तथा धर्मा वेदवाह्याः कथंचन ॥
पण्डिताः स्वोदरार्थं वै पाखण्डानि पृथक् पृथक् ।
प्रवर्तयन्ति कलिना प्रेरिताः मन्दचेतसः ॥

हे महाभाग ! इस कलियुग में धर्म के अनेक भेद हो गये हैं और युगों में ऐसा न था। मन्दबुद्धिवाले पण्डितों ने कलियुग के प्रभाव से अपने पेट के लिये अनेक प्रकार के पाखण्ड खड़ा किये हैं।

पूर्वं ये राक्षसा राजन् ते कलौ ब्राह्मणाः स्मृताः ।
पाखण्डनिरताः प्रायो भवन्ति जनवंचकाः ॥
असत्यवादिनः सर्वे वेदधर्मविवर्जिताः ॥
दांभिकालोकचतुराः मानिनो वेदवर्जिताः ।
शूद्रसेवापराः केचित् नानाधर्मप्रवर्तकाः ॥
वेदनिन्दाकराः क्रूराः धर्मभ्रष्टातिवादुकाः ॥

जो पहले जमाने के राक्षस थे वे ही कलियुग के ब्राह्मण हैं ये प्रायः पाखण्ड में लगे रहते हैं, लोगों को ठगते हैं, झूठ बोलते हैं, वैदिक धर्म से रहित हैं, ये आडम्बरी लोक में चतुर घमण्डी नानाधर्मप्रवर्तक बकवादी, और धर्म भ्रष्ट होते हैं।

पाठक विचार करें कि पुराण का उक्त कथन ब्राह्मण महासम्मेलन पर घटता है या नहीं ? उक्त प्रमाणों के रहते हुये ये लोग शुद्धि का विरोध, बाल विवाह वृद्धविवाह का समर्थन तथा सहवासवय का विरोध क्यों करते हैं। हमारे पूर्वजों ने कभी भी बाल विवाह न किया और वे सदा १६।१७ वर्ष की कन्या में गर्भाधान् करते थे परन्तु ये लोग इन सब बातों को नहीं मानते इसलिये उक्त पुराण का कथन सर्वथा सत्य है।

जनता को चाहिये कि ऐसे ब्राह्मणों के पंजे से बचे और

इनकी बातों पर विश्वास न करे।

* व्रतस्वरूप *

पिछले लेखोंमें पाठकों ने पराक चान्द्रायण आदि व्रतोंका नाम पढ़ा होगा परन्तु यह न जानते होंगे कि ये सब व्रत कैसे हैं और कैसे किये जाते हैं। अतः यहां पर उन सबका स्वरूप दिया जाता है:—

* प्राजापत्य *

त्र्यहं प्रात स्त्र्यहसायं त्र्यहमद्यादयाचितम्।
त्र्यहं परं च नाश्नीयात्प्रजापत्यं चरन् द्विजः॥

प्राजापत्यव्रत करने वाला मनुष्य तीन दिन प्रातः तीन दिन सायंकाल को भोजन करे और तीन दिन उपवास करे। इस प्रकार १२ दिनका प्राजापत्य व्रत होता है।

❋ सांतपनकृच्छ्र ❋

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम्।
एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रं सांतपनं स्मृतम् ॥२।२॥

गोमूत्र, गोबर, दूध दही घी और कुशका जल इनको एक साथ करके एक दिन खावे और कु. दूसरी वस्तु न खावे और दूसरे दिन उपवास करे इस व्रत का नाम कृच्छ्र सांतपन है।

❋ महासांतपन(याज्ञवल्क्य)❋

कुशोदकंच गोक्षीरं दधि मूत्रं शकृद्घृतम्।
जग्ध्वा परेऽह्नि-उपवसेत् कृच्छ्रं सांतपनंचरन्॥
पृथक् सान्तपनद्रव्यैः षडहः सोपवासिकः।
सप्ताहेन कृच्छ्रोऽयं महासांतपनं स्मृतम्॥

सांतपन के उक्त छवों द्रव्यों से ६ दिन तक उपवास करे

अर्थात् ६ दिन इन्हीं को पृथक् पृथक् भक्षण कर उपवास करे और सातवें दिन उपवास करे। इस व्रत का नाम महासांतपन कृच्छ्र है॥

* अतिकृच्छ्र *

एकैकं ग्रासमश्नीयात् त्र्यहाणि त्रीणि पूर्ववत्।
त्र्यहं चोपवसेदन्त्यमतिकृच्छ्रं चरन् द्विजः ॥२१३॥

पहले प्राजापत्य के समान, अति कृच्छ्र करने वाला, तीन दिन सायंकाल, तीन दिन प्रातःकाल और तीन दिन अयाचित में एक२ ग्रास खावे और तीन दिन उपवास करे।

* तप्त कृच्छ्र *

तप्तकृच्छ्रं चरन् विप्रो जलक्षीरघृतानिलान्।
प्रतित्र्यहं पिबेदुष्णान्सकृत्स्नायीसमाहितः ॥२१४॥

तप्तकृच्छ्रका अनुष्ठान करनेवाला विप्र समाहित चित्तहो कर एक वार स्नान करे और तीन दिन गरमजल, तीन दिन गरम दूध, तीन दिन गरमघी, पीवे और तीन दिन उपवास करे।

* पराक कृच्छ्र *

यतात्मनोऽप्रमत्तस्य द्वादशाहमभोजनम्।
पराको नाम कृच्छ्रोऽयं सर्वपापापनोदनम् ॥२१५॥

स्वस्थ और समाहित चित्तसे बारह दिन भोजन न करने का नाम पराकव्रत है। यह सब पापों का नाश करने वाला है।

* चान्द्रायण व्रत *

एकैकं ह्रासयेत्पिण्डं कृष्णे शुक्ले चवर्धयेत्॥
उपस्पृशं स्त्रिसवणमेतच्चान्द्रायणं स्मृतम्॥

सायं प्रातः मध्याह्न में स्नान करता हुआ, पूर्णमासी को

१५ ग्रास खाकर, कृष्णपक्ष में एक २ ग्रास कम करे तो चतुर्दशी को एक ग्रास रह जाता है तब अमावस्या में उपवास करके शुक्लप्रतिपदा से एक एक ग्रास बढ़ावे इसका नाम पिपीलिका चान्द्रायण है।

एतमेव विधिं कृत्स्न माचरेद्यवमध्यमे।
शुक्लपक्षादिनियतश्चरं श्चान्द्रायणं व्रतम्॥

उपर्युक्त ग्रासके घटाने आदि विधिका शुक्ल पक्षसे प्रारम्भ करे। इसको यवमध्याख्यचान्द्रायण कहा गया है।

❀ यति चान्द्रायण ❀

अष्टावष्टौ समश्नीयात् पिण्डान् मध्यंदिने स्थिते। नियतात्मा हविष्याशी यतिचान्द्रायणंचरन्॥२१८॥

शुक्लपक्ष अथवा कृष्णपक्ष से आरंभ करके एक मास तक जितेन्द्रिय होकर प्रति दिन मध्याह्न में ८ ग्रास खाना यतिचान्द्रायण कहलाता है :—

❀ शिशु चान्द्रायण ❀

चतुरः प्रात रश्नीयात् पिण्डान् विप्रः समाहितः।
चतुरोऽस्तमिते सूर्ये शिशुचान्द्रायणं स्मृतम्॥

प्रातःकाल ४ ग्रास तथा सायंकाल चार ग्रास भोजन करे इसका नाम शिशुचान्द्रायण है।

इन सब व्रतों में अब जो साधारण नियम है, उसे आगे मनु जी बतलाते हैं :—२२६, श्लोक

महाव्याहृतियों के साथ प्रति दिन स्वयं हवन करे और अहिंसा-सत्य-अक्रोध-आर्जव का पालन करे॥ २२२॥

दिनमें तीन वार, रात में तीन वार वस्त्र सहित स्नान करे स्त्री, शूद्र पतितसे कभी भाषण न करे २३

रात अथवा दिन में बैठा रहे सोवे नहीं, यदि अशक्त हो जावे तो स्थण्डिल पर लेट जावे, चारपाई पर नहीं ॥ २२४ ॥

सावित्री तथा अघमर्षण आदिका जपकरे २२५

* * * *

पुराणों में १० हजार यवनों की शुद्धि ।

प्रश्न—हमलोग यह अब अच्छी तरह समझ गये कि यवन ईसाई मुसलमानादि की शुद्धि शास्त्रों के अनुकुल हो सकती है । अब यह बतलाइये कि पहले के लोग ऐसा क्यों न करते थे ?

उत्तर—पहले लोग ऐसा करते थे । वे सब लोगों को प्राय-श्चित्त करके अपने धर्म में लेलेते थे—क्योंकि शास्त्र इसी लिये बनाये गये हैं । देखो भविष्य पुराण प्रति सर्ग पर्व खण्ड ४ अ २१

सरस्वत्याज्ञया कण्वो मिश्रदेशमुपाययौ ॥
म्लेच्छान् संस्कृत्य चाभाष्य तदा दशसहस्रकान् ॥
वशीकृत्य स्वयं प्राप्तो ब्राह्मावर्त्ते महोत्तमे ।
ते सर्वे तपसा देवीं तुष्टुवुश्च सरस्वतीम् ॥
पंचवर्षान्तरे देवी प्रादुर्भूता सरस्वती ।
सपत्नीकान्चतान् म्लेच्छान् शूद्रवर्णान्चाकरोत् ॥
कारुवृत्तिकरा सर्वे बभूवुर्बहुपुत्रकाः ।
द्विसहस्रास्तदा तेषां मध्ये वैश्या वभूविरे ॥
तन्मध्ये चाचर्य्यः पृथुः कश्यपसेवकः ।
तपसातंच तुष्टाव द्वादशाब्दं महामुनिम् ॥
तदा प्रसन्नो भगवान् कण्वो वेद विदाम्वरः ।
तेषां चकार राजनं राजपुत्रप ददौ ॥

श्री सरस्वती की आज्ञा से महामुनि कण्वजी मिश्र देश को गये। वहां कथा व्याख्यान द्वारा दशहजार म्लेच्छों को वशमें करके शुद्ध किया। इसके बाद वे सब सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मावर्त में आगये। शुद्ध हुये उन म्लेच्छों ने तपस्या द्वारा सरस्वती देवी की उपासना की। पांच वर्षके बाद देवी ने प्रसन्न होकर स्त्रियों के सहित उनमें से कुछ को शूद्रवर्ण में शामिलकर दिया। वे सब कारीगरी से जीविका करने लगे और बहुत सन्तान वाले हुये। उस दशहजार में से दो हजार वैश्यवर्ण में दाखिल किये गये। उनके बीच में जो पृथुनाम का आचार्य (मुखिया) था वह काश्यप कण्वजी का बड़ाही सेवक था। उसने बारह वर्ष तक उनकी सेवाकी। इसके बाद कण्वजी ने, जो वेद वेत्ताओं में सर्वश्रेष्ठ थे उसे राजा बना दिया और राजपूत की उपाधि दी। इन श्लोकों से साफ साफ प्रकट होता है कि पहले ही से सनातन धर्म में शुद्धि होती है। इसीके आगे और देखियेः—

> नाम्ना गौतमाचार्यो दैत्यपक्ष विवर्धकः।
> सर्वतीर्थेषु तेनैव यंत्राणि स्थापितानिवै ॥ ३३ ॥
> तेषांमध्ये गता ये तु बौद्धाश्चासन् समन्ततः।
> शिखासूत्र विहीनाश्च बभूवुर्वर्णसंकराः ॥ ३४ ॥
> दशकोट्यः स्मृताः आर्याः बभूवुर्बौद्धपन्थिनः।
> पंचलक्षास्तदा शेषाः प्रययु र्गिरिमूर्धनि ॥ ३५ ॥
> चतुर्वेद प्रभावेन राजन्या वह्नि वंशजाः।
> आर्यास्तांस्ते तु संस्कृत्य विन्ध्याद्रेर्दक्षिणे कृतान्
> तत्रैव स्थापयामासुर्वर्ण रुपान् समन्ततः ॥३७॥

अर्थ—गौतम आचार्य हुआ उसने सम्पूर्ण तीर्थों पर मठ

बनाया जो लोग उसमें गये सब बौद्ध बन गये सबने शिखा सूत्र का परित्याग किया। इस प्रकार १० करोड़ आर्य बौद्ध बन गये ! तब शेष ५ लाख आर्य जो बौद्ध नहीं बने थे वे आबू पहाड़ पर गये और वहां चतुर्वेद के प्रभाव से अग्निवंशज राजाओं ने बौद्धों को शुद्ध किया। इन पतितों को फिर शुद्ध करके वर्णधर्म में स्थापन किया। इसीके आगे श्लोक ४८ से बतलाया गया है कि जब आर्यावर्त्त में म्लेच्छों का राज्य हो गया और म्लेच्छों ने भी बौद्धोंके समान सातों पुरियों में अपनी मसजिदें बनालीं तब सब आर्यों में एक कोलाहल मच गया।

यत्राणिकारयामासुः सप्तस्वेव पुरीषु च।
तदधो ये गता लोका स्सर्वे तेम्लेच्छतांगताः॥
महत्कोलाहलं जातमार्याणां शोककारिणम्।
श्रुत्वाते वैष्णवास्सर्वे कृष्णचैतन्यसेवकाः॥
दिव्यं मंत्रं गुरोश्चैव पठित्वा प्रययौ पुरीः।

तब इस कोलाहल को सुनकर कृष्णचैतन्य के सेवक सब वैष्णव गुरुसे दिव्यं मंत्र पढ़कर उन सब पुरियों में चले गये।

रामानन्दस्य शिष्यो वैचायोध्यायामुपागतः।
कृत्वा विलोमंत्तं मंत्र वैष्णवां स्तानकारयत्॥
भाले त्रिशूलचिह्नं च श्वेतरक्तं तदा भवत्।
कण्ठे च तुलसीमाला जिह्वा राममयीकृता॥
म्लेच्छास्ते वैष्णवा चासन् रामानन्दप्रभावतः
आर्याश्च वैष्णवाः मुख्या अयोध्यायांवभूविरे॥

उनमें से रामानन्द का शिष्य अयोध्या पुरीमें गया वहां म्लेच्छोंके उपदेशोंको खण्डन करके उन सबको वैष्णव धर्मी बनाया। माथे में त्रिशूलाकार तिलक दिया। गलेमें तुलसीकी

माला पहना कर रामनामका मंत्र दिया। वे सम्पूर्ण म्लेच्छ रामानन्द के प्रभाव से वैष्णव बन गये और अयोध्या में रहने लगे।

निम्बादित्यो गतो धीमान् सशिष्यः कांचिकां पुरीम्।
म्लेच्छयंत्रं राजमार्गे स्थितं तत्र ददर्श ह ॥ ५८ ॥
विलोमं स्वगुरोर्मंत्रं कृत्वा तत्र स चावसत्।
वंशपत्रसमामारेखा ललाटे कण्ठमालिका।
गोपीवल्लभमंत्रो हि मुखे तेषां स्वराजसः॥
तदधो ये गता लोका वैष्णवाश्च बभूविरे॥

निम्बादित्य कांची पुरीको गया वहां पर म्लेच्छों के विरुद्ध उपदेश देकर सबको अपने वशमें करके वैष्णव बनाया। उनके मस्तक पर वंशपत्रके समान तिलक, कण्ठ में मालातथा गोपी वल्लभका मंत्र सिखाया और वे सब वैष्णव बन गये।

विष्णु स्वामी हरिद्वारे जगाम स्वगणैर्वृत्तः।
तत्रस्थितं महामंत्रं विलोमं तच्चकार ह ॥
तदधो ये गता लोका आसन् सर्वे च वैष्णवाः

विष्णु स्वामी हरिद्वार में गया और म्लेच्छों के विरुद्ध प्रचार करके सबको वैष्णव बनाया। इसी प्रकार वाणी भूषण आदि विद्वानों ने काशी आदि स्थानों में जाकर सहस्रों म्लेच्छों को शुद्ध किया।

भविष्यपुराण प्रतिसर्ग पर्व अध्याय ३ में मुसलमानों के शुद्ध करने का यह वर्णन मिलता है

लिंगच्छेदी शिखाहीनः श्मश्रुधारी सदूषकः।
उच्चालापी सर्वभक्षी भविष्यन्ति नामम॥
विना कौलंच पशवस्तेषां भक्ष्या मता मम।
तस्मान्मुसलवन्तो हि जातयो धर्मदूषकाः॥

अग्निहोत्रस्य कर्तारो गोब्राह्मणहितैषिणः ।
बभवुर्द्वापरसमाः धर्मकृत्यविशारदाः ॥ ८ ॥
द्वापराख्यसमः कालः सर्वत्र परिवर्तने ।
गेहे २ स्थितं द्रव्यं धर्मश्चैव जने जने ।
ग्रामे ग्रामे स्थितो देवो, देशे देशे स्थितो मखः
आर्य धर्मकरा म्लेच्छा बभवुःसर्वतो मुखाः ॥

भावार्थ यह है कि लिंगच्छेदी (जिनकी सुन्नत हो गई हो दाढीवाले वांग देनेवाले, सूअर के बिना सब प्रकार का मांस खाने वाले मुसलमान आर्य बने और आर्य धर्म के रक्षक हुए।

प्राचीन कालमें आर्यों की सभ्यता को विकाश

आज कल जिन देशोंमें, आर्यसभ्यता का एक दम ह्रास हो गया है, उन्हीं देशोंमें पूर्व कालमें आर्य सभ्यता का ज़ारों से प्रचार था। आज कल कुछ लोग समुद्रयात्रा करना पाप और वर्ण विनाशक कह कर अपनी अयोग्यता का परिचय देते हैं, उन्हीं को आंख खोलने के लिये हम यहां पर पं० राम गोपाल शास्त्री रिसर्च स्कालर लिखित दयानन्द कालेज धर्म शिक्षावली सं० १२ से कुछ अंश पाठकोंके लाभार्थ उद्धृत करते हैं।

अफगानिस्तान खोतन आदि देश जहां इस समय जान और माल का भय है कभी आर्यदेश थे। गान्धार में, जिसे आजकल कान्धार कहते हैं, आर्य लोग रहते थे। कान्धार देश के राजा सुवलकी पुत्री गान्धारी से धृतराष्ट्र का विवाह हुआ था। ग्यारहवीं शताब्दि में भीमशाह और त्रिलोचन पालशाह काबुल में राज्य करते थे। उन दिनों काबुल को

राजधानी उद्भांडपुर थी जिसे आजकल उण्ट कहते हैं।

इन दृष्टान्तों से मालूम देता है कि किस प्रकार काबुल और कान्धार देश आर्यों की सभ्यता से भरे हुए थे। अष्टाध्यायी ग्रन्थ का बनाने वाला महर्षि "पाणिनि" भी आर्य पठान था, वह पेशावर के समीपस्थ "शलातुर-जिसे आज कल "लाहूल" कहते हैं, गांव का रहने वाला था। काबुल में आर्यों के पीछे बौद्धों का प्रचार हुआ। बौद्ध लोग धर्म से बौद्ध थे, पर सभ्यता में आर्यही थे। इसी काबुल में बौद्ध भिक्षुकों के कई बिहार और मठ थे, जिनमें सहस्रों भिक्षुक रहकर शिक्षा पाते थे।

काबुल का पुराना नाम कुभा था। बुद्धत्रात और बुद्धपाल नाम के दो बौद्ध काबुल से चीन को गये थे। वहां जाकर उन्होंने चीनी भाषा में दो बौद्ध पुस्तकों का अनुवाद किया था। अफगानिस्तान भी सब आर्य ही था, जो पीछे बौद्ध हुआ। सन् ७५१ ईस्वी में उत्तर पूर्वीय अफगानिस्तान के राजा के पास चीन से एक भिक्षुक भारत आया था। इस मण्डल में " धर्ममतु " नामक भिक्षुक सब का नेता था। इन उदाहरणों से पता लगता है कि यह सारा का सारा इलाका कभी आर्य था।

तुर्किस्तानभी आर्य सभ्यता से भरपूर था। इसी इलाकेके पूर्वीय हिस्से में, कच्चर नाम के गांव के पास, भूमि में दबा हुआ एक संस्कृत का ग्रन्थ, मि० बावर को १८६३ ई० में मिला था। इस ग्रन्थ का नाम " नवनीतक " है। इसमें चिकित्सा का विषय है। इस ग्रन्थ का वहां से मिलना सिद्ध करता है कि कभी आर्य सभ्यता वहां भी थी।

कुत्सन में जिसे आजकल खोतन कहते हैं " शिक्षानन्द "

नामक एक बड़ा विद्वान रहता था। इसने 'त्रिपिटिका' का चीनी भाषा में अनुवाद किया था।

मध्य एशिया में "ह्यूगोविंकलर" नामक अंग्रेजने "बोगाज़" नामक जगह में जब खुदवाई करवाई तो वहां से एक पत्थर मिला जिसपर "हिटेराइट" और "मिटानी" देशों के दो राजाओं की सन्धि खुदी हुई थी। उस सन्धिमें इन्द्र, वरुण, मित्र और नासत्य देवों का नाम लेकर शपथ खाई हुई है। इससे पता लगता है कि मध्य एशिया में आर्य सभ्यता का कभी पूरा जोर था।

तक्षशिला, जो रावलपिंडी जिलेमें, सरायकाला स्टेशनके पास है, वहांसे लेकर कुभा (काबुल) तक तक्षबंशीय क्षत्रियों का राज्य था। इतने इलाके को तक्ष खण्ड कहते थे। इसी तक्षखण्ड का बिगड़ा जो हुआ नाम आज कल ताशकन्द है।

बलख में भी आर्यसभ्यता थी। बलख का पुराना नाम 'बाह्लीक' था। पाण्डु ने जिस माद्री से विवाह किया था, वह शल्य की बहिन थी। शल्य बाह्लीक जाति में से था। बाह्लोक का नाम तो संस्कृत के पुराने ग्रन्थों में बहुत आता है और इसमें तमाम आर्यलोग रहते थे यह भी सिद्ध है।

असीरिया में भी आर्य सभ्यता थी। वहां के पुराने राजाओं के नाम 'सोशाच' आत्तात्म, सुतरण, तुषरत आदि सिद्ध करते हैं, कि वे लोग भी संस्कृत बोलते थे और इसी प्रकार के भावों वाले थे।

चोन का तो कहना ही क्या? यह तो था ही आर्यदेश युधिष्ठिर के राज्याभिषेक पर, चीन का 'भगदत्त' राजा आर्यावर्त में आया था, ऐसा महाभारत में लिखा है। चीन का प्रसिद्ध लेखक 'ओकाकुर' लिखता है कि लोयांग देशमें

कभी दस हजार आर्य परिवार रहते थे।

"बुद्धभद्र" नामक एक भारतीय सन ३६८ ई० में चीन में पहुँचा था। उसके पीछे सन ४२० ई० में 'संगवर्मा' सन ४२४ ई० में "गुणवर्मन्" जो कि काबुल के महाराजा पौत्र था, सिंहल और जावा द्वीपों को देखता हुआ चीनमें पहुँचा था। सन ४३४ ई० में बुद्ध भिक्षुकियोंका एक संघ धर्म प्रचार के लिये चीनको गया था, जहां भारतीय चीन में गये, वहां फाहियान ह्यून्सांग ईत्सिंग आदि चीनी यात्री भी भारत में शिक्षा पाने के लिये आये थे। इससे मालूम होता है कि चीन में भी आर्यसभ्यता का कभी भारी असर था।

जापान।

जापान के प्रसिद्ध विद्वान "ताकाकसु" लिखते हैं कि भारतीयों का जापान के साथ बहुत गहरा सम्बन्ध रहा है। समय २ पर भारत से विद्वान लोग जापान देशमें शिक्षा फैलाते रहे हैं। उसका कहना है कि 'बोधीसेन भरद्वाज नामक ब्राह्मण जो जापान में ब्राह्मण पुरोहित के नाम से प्रसिद्ध है एक और पुरोहित के साथ चम्पा के रास्ते से ओसका में आया था। वहां से नारा में आया था। यहां उसने जापानियों को संस्कृत पढ़ाई थी। शिक्षा देते २ वहां उसने अपनी सारी आयु गुजार दी और अन्त में वहां ही उसकी मृत्यु हुई। नारामें अब तक भी उस ब्राह्मण की समाधि बनी हुई है जिसपर प्रशंसात्मक पद्य लिखे हुए हैं। सन ५७३ ई० में दक्षिणी भारतका बोधिधर्म नामका वहां एक पुरुष पहुंचा था। वहां उसकी राजपुत्री शोटीकु से बातचीत भी हुई थी। जापान के "होरिंज" मन्दिर में बंगाली

लिपि के ग्रन्थ अबतक भी पड़े हुए हैं। जापान पर भारत का क्या उपकार है इसके लिये ताकाकसु का एक लेख "ह्वॉट जापान ओज़ टु इण्डिया" पढ़ना चाहिये।

मिश्र देश में यद्यपि इस समय इस्लामी सभ्यता है पर पुराने काल में यहांभी आर्य सभ्यता का ही असर था। मि० वाल्सबुज ने मिश्र और कालडीया पर एक ग्रन्थ लिखा है इसमें सृष्टि की जो पैदायश उसने लिखी है, वैसाही सृष्टि की उत्पत्तिका वर्णन शतपथ ब्राह्मण ११-१-६-१ में मिलता है। इस लेख से जाहिर है कि किस प्रकार वहां कभी आर्यभाव थे। बाग्शबे जो एक मशहूर मिश्री विद्वान् हैं लिखते हैं कि मिश्र देश के लोग भारत से मिश्र में आये थे।

संस्कृत की एक पुरानी मनुमत्स्य की कथा ब्राह्मण ग्रन्थोंमें पाई जाती है। थोड़े से परिवर्तन से यह कथा यूनान मिसर, आयरलैंड बेबोलोनिया के पुराने शिलालेखा व पुस्तकों में मिलती है।

❀ जावा ❀

हिन्द तथा प्रशान्तमहासागर के बीच भारतीय द्वीप समूहों में जावा एक मुख्य द्वीप है। संस्कृत ग्रन्थों में इसका नाम यवद्वीप आता है। प्रसिद्ध चीनी यात्री फ़ाहियान ने भी इसे यवद्वीप ही लिखा है संस्कृतमें यवका अर्थ है "जौ" यवका ही अपभ्रंशपीछे जावा बना है।

जावा द्वीप का क्षेत्र फल ४९, १७६ बर्ग मील है। यह द्वीप पूर्वीय तथा पश्चिमीय इन दो भागों में बटा हुआ है। इसकी जधानी "बटेविया" है। इसवी सन्से कईवर्ष पूर्व कलिङ्ग-

देशीय एक आर्यों का दल बहुत सी नावों* पर सवार होकर पहले जावा में पहुँचा था। उन साहसी भारतीयों ने वहां जाकर जंगलों को साफ किया, ग्राम और सड़कें बनवाईं अच्छे झरने और नदियों पर आवास स्थानबना कर इस भूमि को सुन्दर देश बना दिया।

समय २ पर भारतीय वहां जाते रहे। भारतीय आर्य सभ्यता के भग्नावशेष अब तक भी इसी बात को सिद्ध कर रहे हैं कि भारतीय सभ्यता का वहां साम्राज्य था। 'फाहियान' जो गंगा के मार्ग लङ्का और फिर वहां से जावा होते चीन गया था, लिखता है कि हिन्दुओं का जावा पर अधिकार था। जिस नौका पर वह चीनी यात्री सवार था उस नौका के नाविक आर्य थे। यद्यपि वहांके मंदिर इस समय टूटे पड़े हैं, लोगों की भाषा और धर्म बदल गये हैं, पर तो भी ध्यानपूर्वक अनुशीलनसे पता लगता है कि अभी तक भी जावा में प्रत्येक बातमें हिन्दू सभ्यता के चिह्न पाये जाते हैं।

जावा के आदम निवासियों में यह कथा अब तक भी प्रचलित है कि सन ७५ में " आजीसक " नाम का गुजरातका प्रभावशालीराजा आया था।

जावा के प्राचीन इतिहास से इसी तरह से पता चलता है कि ६०३ ईस्वी में गुजरात के राजा ने अपने पुत्र को ६००० साथियों के साथ जावा भेजा इसी प्रकार समय २ पर भारत से लोग वहां जाते रहे।

---

* नोटः—भारतीयों का पोतविज्ञान तथा बाहरजाना इसके लिये देखो श्री राधाकुमुद मुकरजी की लिखी "ए हिस्ट्री आफ़ इन्डिअन शिपिङ्ग" और एच० बी० सारदा की "हिन्दू सुपीरिआरिटी"।

जिस प्रकार भारत में आर्यों के बिचार बदलते रहे वैसेही इनके साथ सम्बन्ध रखने वाले आर्य बदले। भारत में मूर्तिपूजा आरम्भ हुई फिर जावा में भी यही भाव उत्पन्न हुआ। जब भारत में मन्दिरों की स्थापना हुई तब वहां भी मन्दिर बनने लगे। विशेष करके यह बातें जैन और बौद्ध-काल में हुई हैं। क्योंकि इससे पहले तो भारतीयोंमें मूर्ति पूजा ही न थी।

इस समय भी जावा में जो खोज हुई है उसमें बौद्ध और हिन्दू संस्कारों के मन्दिर मिले हैं। बोरो बोदार और कम्बनम में बौद्धों के और बेनुमस बेजेलन कादू जौके जोकारता सुरा कमता' सामारंग' सुरावाया, कोदरी तथा पोविंगलों आदि प्रान्तों में हिन्दू मंदिर मिले हैं। इन मंदिरोमें कई प्रकार के शिला लेख हैं। इसमें के बहुत से लेख बर्लिन [जर्मनी] के अजायब घर और स्काट लैण्डके मिन्टो हाउस में पड़े हैं। इन लेखों में बौद्ध और हिन्दु धर्म सम्बन्धी बातें हैं।

१४ वीं शताब्दि तक आर्यसभ्यता तथा भारतीयों का प्रभाव जावा में रहा। पीछे पन्द्रहवीं शताब्दी में मुसल्मानों ने इस द्वीप पर आक्रमण किया। अपनी धर्मान्धता के अनुसार यहां भी मुसल्मानों ने जावा निवासी हिन्दू और बौद्धों पर अनेक प्रकार के अत्याचार किये। मन्दिर तोड़े और उन्हें अपने इस्लामधर्म में बलात्कार से प्रविष्ट किया।

कुछ समय के अनन्तर डच लोगों ने अपनी दृष्टि इस द्वीपकी ओर उठाई। उन्होंने मुसलमानों को परास्त करके इस द्वीप को अपने आधीन कर लिया। इस समय यह द्वीप डच सरकार के आधीन है। इस द्वीपमें चीनी, मुसल्मान, योरोपीय और जावा के आदिम निवासी लोग निवास करते हैं। गणना

में अभी भी संख्या मूलनिवासियों की अधिक हैं।

❋ काम्बोज जाति हिन्दू बनाई गई ❋

काम्बोज क्षत्रिय भी बाहर से आये और आर्य जाति में हज़म हो गये। आजकल ये कम्बोज [कमो] हिन्दू जाति की उपजाति है। अमृतसरमें इस जाति की कानफ्रेंस हुई थी। हिन्दूजाति में अब इनसे कोई भेद भाव नहीं समझा जाता। ये काम्बोज आर्यजाति में आकर इतने दृढ़ अङ्ग बने कि इन्होंने विदेशों में जाकर विदेशियों को भी आर्य बनाया। 'स्याम' के उत्तर पूर्व और दक्षिण में एक बहुत विस्तृत काम्बोज या कमबोडिया देश है। उसपर फ्रांस की प्रभुता है। उसका संयुक्त नाम इण्डो चायना है। इस विस्तृत देश का उत्तरी भाग टानकिन, पश्चिमी भाग अनाम और दक्षिणीभाग कोचीन चायना अथवा कम्बोडिया कहलाता है। इसी अनाम और कम्बोडिया में किसी समय हिन्दुओं का राज्य था।

'जावा' की भांति इस द्वीप को भी भारतीयों ने ही बससाया था। इँडो-चायना में १२० लाख अनामी १५ लाख कम्बोडियन, १२ लाख लाउस, २ लाख चम और मलाय, १ हजार हिन्दू और ५० लाख असभ्य जंगली आदमी रहते हैं। अनामी कम्बोडियन और लाउस नामके अधिवासीबौद्ध हैं, जो एक हजार हिन्दू हैं, वे सब के सब तामिल हैं! चम और तलावा लोग प्रायः मुसलमान हैं, उनमें से कोई २५ हज़ार चम, जो अनाम के वासी हैं, बहुत प्राचीनधर्म ब्राह्मण-धर्म के अनुयायी हैं। वे सब शैव हैं और अपने को 'चम जात' कहते हैं।

'कम्बोडिया' का संस्कृत नाम कम्बोज है। इस देश के शिला लेख तथा मूर्तियों और मन्दिरों की बनावट से संसार के सब विद्वानों ने निश्चय किया है, कि यहां भी हिन्दू तथा बौद्ध धर्मानुयायी लोग रहते थे। कम्बोज का प्रधान राजा जिसका चीनी भाषा में नाम क्याच्यू लिखा है, उसने अपना नाम "श्रुतवर्मा" रखा था। वर्मा वंश का राज्य उस देश में उसी से आरम्भ होता है। श्रुतवर्मा ने ही विशेष रूप से वहां आर्य सभ्यता का प्रसार किया है। वह राजा अपने आपको कौण्डिन्यगोत्र का बताया करता था। अपने वंश का नाम उसने सोमवंश बताया था। ४३५ ई० से ८०२ ई० तक इस वंश का वहां राज्य रहा। इतने काल में २५ राजाओं ने राज्य किया।

ईसा की छठी शताब्दि में इसी वंश में एक राजा हुआ है जिसका नाम "भववर्मा" था। प्रतीत होता है, उस समय आर्यावर्त देश की तरह उधर भी पौराणिक धर्म फैल गया था।

इसीसे वहां भी भव वर्मा द्वारा शिवमंदिर की स्थापना का वर्णन मिलता है। शिवलिंग के साथ २ रामायण महाभारत और पुराण ग्रन्थ भी रखवाये थे। उसने मंदिर में एक ब्राह्मण की नियुक्ति की जो प्रतिदिन इन ग्रन्थों की कथा किया करता था।

सातवीं शताब्दि में इसीकुल में एक "ईशान वर्मा" नामक राजा हुआ। उसने अपनी राजधानी का नाम बदलकर अपने नाम से ईसान पुर रखा। जो भारतीय काम्बोज में गये थे वहां भी नगरों के नाम उन्होंने भारतीय नाम पाण्डुरङ्ग, विजय, अमारवती आदि ही रखे थे। वहां से जितने

शिलालेख प्राप्त हुए हैं सब संस्कृत में हैं और उनपर अन्द्र भारतीय शक राजा का वर्ता गया है।

एक शिला लेख से यह भाव निकला है कि भारत का एक वेदवित् "अगस्त्य" नामक ब्राह्मण था। उसका विवाह सातवीं शताब्दि में काम्बोज वंश की राजपुत्री "यशोमती" से हुआ था। उसका पुत्र नरेन्द्र वर्मा हुआ जो बड़ा होकर राज्य का अधिकारी बना। दशवीं शताब्दि में यमुना नदी तटवासी पं० दिवाकर काम्बोज में गया। उसने वहां इतनीप्रसिद्धि और मान प्राप्त किया कि वहां के राजा राजेन्द्र वर्मा ने अपनी पुत्री "इन्द्र लक्ष्मी" का विवाह उससे कराया।

ब्राह्मणों का इतना आधिपत्य था कि राज्याभिषेक इनके बिना न हो सकता था। पं० दिवाकर पं० योगेश्वर और पं० वामशिव के नाम उल्लेखनीय हैं। इन तीनों का राजापर भारी प्रभाव था। नरेन्द्रवर्मा, गणित व्याकरण और धर्मशास्त्र पढ़ा हुआ था। ये तीनों राजपण्डित व्याकरण और अथर्वेद के पण्डित थे। शिलालेखों से पता मिल ता है, कि व्याकरण के प्रसिद्धग्रन्थ महाभाष्य दर्शन मनुस्मृति और हरिवंश पुराण का भी उधर विशेष प्रचार था।

कम्बोडिया के निवासियों के जन्म मत्यु, आदि सस्कार हिन्दू-धर्मशास्त्रों के अनुसार होते थे। उनका विश्वास था, कि मरने के पीछे प्राणी शिवलोक में जाते हैं।

भारत में ज्यों २ मूर्ति पूजा का प्रचार हुआ त्यों २ बाहरी उपनिवेशों में भी आते जाते भारतीयों में, यह भाव पैदा होता गया। मर्तियों में वहां शिव, 'उमा' शक्ति, सागर में नाग पर बैठे विष्णु, गणेश, स्कन्द, नन्दी, तथा बुद्ध की मूर्तियां मिली हैं। वहां के "अंगकोरवार" के मंदिर का

समाचार जानकर तो पूरा ;निश्चय होता है कि वे आर्य किस तरह बढ़े चढ़े थे।

"अंगकोरवार" के खण्डहर काम्बोडिया प्रदेश में है। यह खण्डहर १५ मील के घेरे में है। इस मंदिर की नींव १० वीं सदी में हिन्दुओं ने रखी थी। "अंगकोर वार" ही उन दिनों कम्बोडिया की राजधानी था। इस मंदिर को हिन्दु राजाओंने बनवाया था। संसार में आजतक की कोई ऐसी ईमारत नहीं जिसके साथ उसकी उपमा दी जा सके। मिसर के "पिरेमिड" भी इस इमारत के सामने हेच हैं। फ्रांस का रहनेवाला "हेनरी मोहार" कहता है, कि इस मंदिर के मुकावले में केवल "सालोमन" का मंदिर हो सकता है और कोई नहीं। कई लोग जो इसे देखते हैं कह देते हैं कि इसे तो देवदूतों (फरिश्तों) ने ही बनाया होगा। यूनान और रोमकी कोई भी पुरानी इमारत इसका मुकाबला नहीं कर सकती। इसकी सीढ़ियों दीवारों और दलानो में बहुत से शिलालेख हैं। वे शिलालेख संस्कृत भाषा में है। इससे पता चलता है, कि वहाँ आर्य सभ्यता का उस समय पूरा जोर था। इस मंदिर के संबन्ध मे तो एक ग्रन्थ लिखागया है। जिसका नामही "अङ्कोरवार" है। इसमें इन खण्डहरों के अनेक चित्र दिये गये हैं। सबसे खूबी की बात इस मंदिर में यह है कि इसके मध्यमें सब से बड़ा भवन है यही पूजाभवन है। उस भवन में कोई मूर्ति नहीं। इस मंदिर की खोज करनेवाले कई फ्रांसीसियोंका कथन है, कि इस पूजाभवन की बनावट से पता लगता है, कि यहां बिना मूर्ति के भगवान की प्रार्थना की जाती थी।
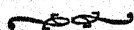
चम्पा

चम्पा उपनिवेश की नींव दूसरी शताब्दि में रखी गई थी इस समय इसे "अनाम" कहते हैं। चम्पा एशिया के दक्षिण कोण में विद्यमान थी। इसके तीन प्रात में जिसमें "इन्द्रपुर" "सिंहपुर" प्रसिद्ध नगर थे। दक्षिण में "पाण्डुरङ्ग" प्रांत था, जिसका "वीरपुर" नगर प्रसिद्ध था। मध्यगत प्रांत का नाम "विजय" था। इसमें "विजय नगर" और श्री विनय" बन्दर गाह थे। चम जाति के लोग पहले यहां आकर बसे थे।

इस उपनिवेश में भी हिन्दूसभ्यता का साम्राज्य था। "भद्रवर्मन" राजाने मिसन में एक मंदिर बनवाया था जिस का नाम "भद्रेश्वर" था। इस राजा का पुत्र "गङ्गराज" था लिखा है कि इसने भारत में आकर गङ्गा की यात्रा की थी।

चम्पा में उसी धर्म का प्रचार रहा था जो कम्बोज में था। देवी, देवता, शिव, विष्णु आदि वही पूजे जाते थे, जो काम्बोज में थे। दोनों उपनिवेशों में हिन्दू धर्म था। उसमें भी शैव धर्म की प्रधानता थी। यहां किम्बदन्ती है कि भारतीयों के चम्पा जाने से पूर्व "पो—नगर" में भगवती देवी की पूजा होती थी।

चम्पा में भी ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य तथा शूद्र वर्ण माने जाते थे। यज्ञों का भी प्रचार पर्याप्त था। एक शिलालेख में लिखा हुआ है, कि वहां के "विक्रान्त वर्मा" राजा का विचार था कि अश्वमेध यज्ञ सब कर्मों से अच्छा कर्म है और ब्राह्मण की हत्या से बढ़कर कोई पाप नहीं। ब्राह्मणों का सत्कार खूब

था। बड़े पुरोहित को श्रींपर पुरोहित कहते थे।

जिस समय चम्पा शत्रुओं से जीती गई, तो भगवती की मूर्ति अनामियों को वेच दी गई। अभीतक भी अनामी लोग देवी की पूजा करते हैं परन्तु सामायिक "आनामियों" को अब इस बात का भी ज्ञान नहीं है कि यह देवी कौन है।

ईसवी सन् ८११ के एक शिलालेख पर नारायण और शंकर की मूर्त्ति है नारायण को कृष्ण के रूप में प्रकट करा कर हाथ पर गोबरधन पहाड़ उठवाया हुआ है। ई० ११५७ के एक लेख में राम और कृष्ण का वर्णन है।

चीन के यात्री "ई—चिङ्क" ने लिखा है कि सातवीं शताब्दि के अन्तमें चम्पादेश में बौद्ध भी अधिकतर आर्य समिति के साथ ही सम्बन्ध रखते थे। उसका कथन है, कि आर्यसर्वास्तिवादनधर्म में बहुत थोड़े लोग थे।

चम्पा के हिन्दू तथा बौद्ध धर्मानुयायियों का परस्पर बहुत मेल जोल था! ईसवी ८२९ में दक्षिणी चम्पा में एक लेख निकला है जिसमें लिखा है, कि एक "बुद्ध निर्वाण" नामक पुरुष ने अपने पिता की स्मृति में दो बिहार बनवाये थे एक जिन के नाम पर और दूसरा "शंकर के नाम पर।

सोलहवीं शताब्दि के अन्त में "फ़ाईर जबराईल,, ने इस देश को देखा और उसने बताया कि तब तक भी हिन्दू सभ्यता के चिन्ह विद्यमान थे।

अनार्यों को आर्य बनाने में

डाक्टर भण्डार कर एम० ए० की सम्मत्ति।

डाक्टरसाहब के व्याख्यान में पुराणों इतिहासों तथा

शिलालेखों के आधार से मुसलमानों के राज्य से पहिले (कलियुग में ही) समय में विदेशीय या विजातीय अनार्योंको आर्य्य बनानेका विधान है और हम इस से यह परिणाम निकालते हैं कि जब आज से हजार वर्ष पहिले अनार्यों से आर्य्य बन जाते थे तो आज उन का इसी विधि से आर्य बनाना कोई पाप कर्म्म नहीं है। डाक्टर साहिब पुराणों के उदाहरणों से आभीर शक, यवन, जातियों के आने और महाराजा अशोक के लेखों से ग्रीक लोगोंका नाम योण (यवन) सिद्ध करते हुए इनका हिन्दू होना बताते हैं और इसके आगे महाराजा मिलिंद्र (जिस का राज्य पंजाब और काबुल में था) का पहिला नाम मिनिडर लिखते हुए लंका के शिला लेख वा सिक्कों पर से पाली भाषा में लिखे शब्दों से बताते हुए सिद्ध करते हैं कि बहुत बाद विवाद के पीछे वह बुद्ध धर्मानुयायी। हुआ यही नहीं, किन्तु काली के बहुत से शिला लेखों से यवनों का सिंहधैर्य व धर्म्म आदि नाम रख हिन्दू होना सिद्ध होता है। और वहां एक लेख से यह भी निश्चय होता है कि सेतफरण का पुत्र हरफण (वहालोफर्नस) बहुत सा दान पुण्य करने से हिन्दू बनाया गया।

जुन्नर—के शिला लेख से चिटस और चंदान नामक यवनों को शुद्ध कर चित्र और चन्द्र बनाना सिद्ध होता है और इनके जीवन से आर्य्य पुरुषों से खान पान होना भी प्रतीत होता है।

नाशिक—(जिला) में एक शिलापर यह लेख है।

"सिधं ओतराहम दत्ता मिति यकस योणकश धंम देव पुतस इन्द्राग्नि दतस धर्म्मात्मना"।

इससे प्रतीत होता है कि उत्तर (सरहद) से आए हुए यवन के पिता को संस्कार कर धर्म्मदेव और पुत्र को इन्द्राग्निदत्त बनाकर आर्य बनाया, ऊपर के नामों से यह भी प्रतीत होता है कि सिन्ध के पार शुरूसे ही शेखमहम्मद और शेखअबदुल्ला नहीं बसते थे।

नासिक—के एक और शिला लेख से प्रसिद्ध क्षत्रप राज वंश के दिनीक, नहपान, क्षहशत, आदि राजाओं को शुद्ध किया गया और नहपान की कन्यासे ऋषिभद्त्त (उषवदात) नामी आर्य का विवाह हुआ। इन राजाओं के नाम से २४ हज़ार सिक्के अभी मिले हैं। नहपान के जामाता ने एक बार ३००००० तीन लाख गौएं दान कर के दी थीं और हर वर्ष लक्ष ब्राह्मण को भोजन कराया करता था। इन का राज्य ५० वर्ष तक नासिक में रहा। पीछे गौतक पुत्र ने इनको निकाल दिया, इन क्षत्रपोंका एक वंश उज्जयिनी में चला गया। वहां उसके १६२ पुरुष हुए उनका वहां सवा दो सौ वर्ष राज्य रहा, यह ईसा के संवत से ३८६ वर्ष पहिले का समय है।

क्षत्रप शब्दका अर्थ—कदाचित् कोई कहे कि यह क्षत्रप लोग शुरू से ही आर्य थे इनका भोजन करने में कोई दोष नहीं इसलिये हम क्षत्रप शब्द का अर्थ कर देते हैं।

क्षत्रप—शब्द साधारण दृष्टि से तो संस्कृतका प्रतीत होता है परन्तु वास्तव में संस्कृत के सारे साहित्य (कोष व्याकरणादि) में यह शब्द कहीं नहीं पाया जाता, हां क्षत्रप वा खत्रप यह शब्द फारसी भाषा के इतिहास का [Satrup] शब्द एक प्रतीत होता है जिसका अर्थ है राजाधिराजों के हाथ का पुरुष वा राज्याधिकारी वा प्रतिनिधि प्रतीत होता है फिर आजकल जिस प्रकार आर्यावर्तके पुरुष चीन आदि सम्राटों की

सेनाओं में जाकर प्रतिष्ठा पा उच्च अधिकार पा रहे हैं इसी प्रकार किसी समय विजातीय लोग आर्य सम्राटों के आधीन में रह कर अधिकार प्राप्त करते थे यहां तक कि दूसरे द्वीपों में राज प्रतिनिधि बन कर जाया करते थे।

टालेमी—नामक प्रसिद्ध भूगोल ग्रन्थकार ने उज्जयिनी का वर्णन करते २ तियस्थ नीज और पुलुमाई तत्कालीन राजाओंका नाम अंकित करता है पर उज्जयिनीके पुराने सिक्के और शिलाओं पर राजा का नाम चष्टन लिखा है कदाचित् यही तियस्थनीज होगा। यह राजा क्षत्रप लोगोंका आदि पुरुष हुआ है, यह नाम आर्यावर्तीय वा आर्यजाति का प्रतीत नहीं होता परन्तु इसके पुत्र का जयदाम और पौत्र का नाम रूद्रदाम था जिससे पाया जाता है कि इनका आधानाम जय तथा रुद्र हिन्दू होगया था और थोड़े काल के पीछे इसके बंश धरों के नाम रूद्र सिंह आदि हुए जो पूरे संस्कृत (आर्य) नाम हैं इनके इतिहास से यह भी सिद्ध होता है कि क्षत्रप लोग सबसे जल्दी आर्य बिरादरी में मिलाए गए अगले अङ्क में प्राचीन तुर्कों की शुद्धि का उल्लेख करेंगे॥

(२ रा अंक)

हमने विगतांक में डाकटर साहिब के व्याख्यान से बहुत से पुरुषों तथा समुदायों को आर्य्य बनाना (विदेशी वा विधर्मी होने पर भी) दिखाया था आज उसके उत्तरार्ध में से कुछेक दृष्टान्त ऐसे देते हैं जिन से यह सिद्ध हो कि मुसलमानों के राज्य के कुछ काल पहिले से विदेशी वा विजातीय अनार्यों को आर्य्य बनाया जाता था।

डाकटर साहिब फर्माते हैं नासिक के एक और शिलालेख

से सिद्ध होता है कि आर्य्य लोग शक जाति की स्त्रियों से खुले तौर पर विवाह कर लेते थे।

नासिक-के एक और शिला लेख में लिखा है कि:—।

"सिद्धं राज्ञः माढ़री पुत्रस्य शिवदत्ताभीरपुत्रस्य आभीरेस्वर सेनस्य संवत्सरे नवम ६ गिम्हपखे चौथे ४ दिवस त्रयोदश १३ एताय पुवय शकाग्निवर्मणः दुहित्रा गणपकस्य रेभिलस्य भार्यया गणपकस्य विश्ववर्म मात्रा शकनिकया उपासिकया विष्णुदत्तया गिलान भेषजार्थं अक्षयनीवी प्रयुक्ता"

इस लेख से प्रतीत होता है कि अग्निवर्मा की कन्या और विश्ववर्मा की माता "विष्णुदत्ता" ने रोगियों के लिये एक "अक्षयनीवी" (धर्मार्थ फण्ड) कायम किया था। यह स्त्री शकनिका जाति की थी और इसका विवाह आर्य्य क्षत्रिय से होनेके सबब इसका पुत्रभी बर्मा कहलाया ऐसा प्रतीत होता है।

इस लेख में आभीर राजा का संवत् दिया है उस समय महीनों का प्रचार नहीं था किन्तु ऋतु के हिसाब से लोग वर्ष गिना करते थे आभीर लोगों का राज्य शक लोगों के पीछे हिन्दुस्तान में हुआ, आभीर लोग मध्य एशिया से हिन्दुस्तान में आए थे, विष्णुपुराण में इनको म्लेच्छों में गिना है बराहमिहिर भी इन्हें म्लेच्छ ही कहते हैं।

काठियावाड़-के गुंडा गांव के शिला लेख से भी आभीर राजाओंके राज्य का पता लगता है। जिस समय अर्जुन श्रीकृष्ण की स्त्रियोंको ला रहा था उस समय इन्ही लोगों ने अर्जुन को लूटा था, यह लोग ही पीछे से अहीर बस गए और आज सुनारों तर्खाणों ग्वालों और ब्राह्मणों तकमें पाए जाते हैं अर्थात् इस जाति के मनुष्यों ने अपने आप को म्लेच्छ वर्ग से निकाल कर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र वर्ण के पद को प्राप्त

कर लिया, इसमें बहुत से लोग शूद्र होने पर भी जनेऊ डालते हैं। पूना के सुनार अहीर जनेऊ पहनते हैं। खान देश के अहीर नहीं पहनते कुछ काल से इन में इस बात से विरोध भी हो रहा है।

तुर्क हिन्दू बन गये–हिन्दुस्तान के उत्तर की ओर तुर्क लोगों का राज्य था जिसको राजतरंगिणि पुस्तक में "तुरुष्क" वा कुषण के नाम से लिखा है इसी वंश का हिमकाडफिस नामका एक राजा हिन्दू होकर शैव बन गया था यह मसीह की दूसरी वा तीसरी सदी में राज्य करता था इनके विशेषणों में "राजाधिराजस्य सर्व लोकैकेश्वरस्य माहेश्वरस्य" लिखा है, इसका नाम हिन्दुओं का सा नहीं है परन्तु यह पक्का शैव हिन्दू था इसके सिक्कों पर एक तरफ तुर्की टोपी और दूसरी तरफ़ नन्दी बैल तथा त्रिशूल हस्त एक पुरुष (शिव) की तस्वीर है जिस से सिद्ध है कि यह राजा तुर्कों के वंश में पैदा होकर भी हिन्दू होगया ॥

दूसरे देशों के आये हुए लोग ब्राह्मण भी बन जाते थे इस के बहुतसे उदाहरणोंमें से एक " मग " जाति मगलोक ब्राह्मण के लोगों का है, इन लोगों ने पहिले पहिले होगये। राजपूताना, मारवाड़, बङ्गाल तथा संयुक्त प्रान्त में वसती की थी, शालिबाहन के १०२८ शके के एक शिला लेख से (जो नीचे दिया जाता है)।

देवोजीया त्रिलोकी मणिरयमरूणो यन्निवासेन पुण्यः,
शाकद्वीपस्सदुग्धाम्बुनिधि वलयितो यत्र विप्रा मगाख्याः।
वंशस्तद्द्विजानां भ्रमि लिखित तनोर्भास्वतः स्वाङ्गामुक्तः,
शाम्बो यानानिनाय स्वयमिह महितास्ते जगत्यां जयन्ति ॥१॥

सिद्ध होता है कि शाकद्वीप में मग लोक रहते थे वहां से

साम्ब (साम्ब) उन्हें यहां लाया। इस वंश में छः पुरुष प्रसिद्ध कवि थे, इसका कुछ वर्णन भविष्य पुराण में भी मिलता है। साम्ब ने चन्द्रभागा (चिनाब) नदी के तट पर एक मन्दिर बनवाया उस समय ब्राह्मणलोग देवपूजन को निन्दनीय कर्म्म समझते थे इसलिये साम्ब को कोई पुजारी न मिला और उसने शाकद्वीप से आये हुए मग जाति के लोगों को पुजारी बना दिया। मुलतान के निकट जो सुवर्ण का भारी मन्दिर था जिसे पिछली सादी में मुसलमानों ने तोड़फोड़ दिया प्रतीत होता है वह वही मन्दिर हैं जिसे साम्ब ने बनाया था।

देवस्थान में मगों का अधिकार

शनैः २ इनका देवपूजन में यहां तक अधिकार बढ़ा कि बराह मिहर से पण्डितों ने भी इनकी बाबत लिखा है किः—

विष्णोर्भागवतान् मगांश्च सवितुर्शम्भोः सभस्मद्विजान् ॥

विष्णु की मूर्त्ति की स्थापना भागवत् लोगों के हाथ से और सूर्य देवता की मग लोगों के हाथ से करानी चाहिये।

मग लोग कौन थे?

कदाचित् लोगों को मग लोगों की जातिके सम्बन्धमें संदेह हो इस लिये हम बतला देते हैं कि हिन्दुस्तान के मग और पर्शिया के मगी [magi] एक ही हैं पर्शियों के धर्म्म पुस्तक की भाषा भी बेद की भाषा से मिलती है और "मित्र" आदि पूज्य देवता भी "मग" और "मगी" लोगों के एक से ही हैं यह लोग उधर सीरिया, एशिया, मायनर, और रोम तक फैले हुए हैं और उधर हिन्दुस्तान तक।

पहिले पहिल यह लोग एक सर्प की...... डोरी गले में डाला करते थे परन्तु ज्योंही इन्हों ने ब्राह्मण पदवी प्राप्त की

त्योंही उसे त्याग जनेऊ (यज्ञोपवीत) पहिरना आरम्भ कर दिया, इसका भी विशेष वर्णन भविष्य पुराण में ही मिलता है।

हूण लोगों का हिन्दु होना

ईसा के पांचवें शतक में हूण लोग हिन्दुस्तान में आये और कुछ काल बाद इस कुल के नर बीरों ने भारत के कई भागों का राज्य प्राप्त किया। शिला लेखों से तोरमाण तथा मिहरकुल दो राजाओं का वर्णन अब तक मिलता है।

छत्तीसगढ़ के राजा कर्णदेव ने एक हूण कन्या से विवाह किया था और राजपूतों की बहुत सी जातियों में एक हूण जाति भी है इन सब घटनाओं से पाया जाता है कि हूण लोगों को आर्य्यों ने आर्य बना लिया था।

गुज्जर लोग क्षत्रिय बन गए

इतिहास में जिस प्रकार आभीर, हूण, शक, यवन वा तुर्क आदि का हिन्दू समाज में मिलकर हिन्दू संस्कारों को धार हिन्दू बनना सिद्ध होता है इसी प्रकार गुज्जर लोगों का विदेश से यहां आकर हिन्दू बनाना पाया जाता है पंजाब में गुजरात शहर और दक्षिण में गुजरात प्रान्त इन लोगों के बसाए हुए हैं संस्कृत के गुर्जर शब्द से गुज्जर बन गया "गुर्जरत्रा" से गुजरात प्राकृति शब्द बन गया "गुर्जरत्रा" का अर्थ गुर्जर [गुज्जर] लोगों को आश्रय देकर रक्षा करने वाला है शुरू २ में यह लोग उस स्थान में आकर आश्रय लिया करते थे, गुजरात प्रान्त का पहिला नाम "लाट" था। लाटी भाषा वा लाटी रीति बड़ी प्रसिद्ध थी। काव्य प्रकाशादि में इसका वर्णन भी है। मसीह की बारहवीं सदीके पीछे इसका नाम गुजरात पड़ा, गुज्जर लोगों का भारत के भिन्न २ प्रान्त पर राज्य रहा, इस वंश के १ देव शक्ति, २ रामभट ३ राम-

भद्र, ४ भोज राजा ५ महेन्द्रपाल, ६ महीपाल छः राजे थे, इनमें से कन्नौज के राजा महेन्द्र पाल, के वंश को उसके गुरु कवि-राज शेखर ने अपने बालरामायण में रघुवंश की शाखा मानकर इसको "रघुकुल चूड़ामणि" लिखा है परंतु वास्तवमें यह विदेशी (म्लेच्छ) लोग थे, और इनकी जाति के बहुत लोग गुज्जर नाम से रशिया के अज़ाब समुद्रके किनारे अब तक बस रहे हैं।

गुज्जरों का चारों वर्णों में प्रवेश

जिस प्रकार अहीर लोग अपने २ कामों से हिन्दुओं की ब्राह्मण, सुनार, तर्खाण आदि जातियों में प्रवेश कर गए इसी प्रकार गुज्जरों ने भी चारों वर्णों में स्थान प्राप्त किया, अर्थात्, राजपूतानादि में बहुत से गौड़ ब्राह्मण बने बहुत से गूजर, क्षत्रिय, लुहार, तर्खाण सुनार वा जाट आदि बन गए।

गुज्जर राजपूत—राजपूत वंशों में १ पडिहार, प्रमार किंवा परमार ३ चाहुवान (चौहाण) ४ सोलंकी ऐसी जातियां हैं जिनका संस्कृत व्याकरण से अर्थ करना ऐसा ही है जैसा कुकुर का अर्थ "कौति वेदं शब्दं करोति, इति "कुकुरो ब्रह्मा"। हां इनमें से पडिहार शब्द कई स्थानों में गुज्जर शब्द का वाची तो आता है जिससे पाया जाता है कि और वर्णों में मिलने की तरह गुज्जरों ने राजपूत वंश में भी प्रवेश कर लिया।

इत्यादि लौकिक इतिहासों से सिद्ध होता है कि आर्य लोग शुरू से कर्म की प्रधानता को मुख्य रखकर न केवल अपने भाइयों को शुद्ध कर अपना बना लेते थे किन्तु इतरों को भी अपने प्रभाव में लाकर अपना बना लेते थे, समझदार आर्योंका अब भी यही विचार है कि इस जाति-हितैषी अपने पूर्वजों के

सनातन धर्मको जो परम्परासे चला आता है अब भी इसका विधि पूर्वक स्वच्छता से निबाहे जाना चहिए, इति ॥

वर्णसंकरता का भय

शुद्धिके इतने प्रमाण और उदाहरण शास्त्रों और पुराणों में रहते हुए भी पण्डित लोग इसके विरोधी बने, इससे बढ़कर आश्चर्य क्या हो सकता है? शुद्धिके प्रचारने इतना तो कर दिया कि हिन्दूलोग इसके समर्थक होगये और भरसक अपनी जाति में से लोगोंको जाने नहीं देते और यदि कोई भूल चूक से चला गया या कोई स्त्री बालक युवती विधर्मियों के बहकावे में विधर्मी बन गई, तो हिन्दू लोग उन्हें ले लेने लगे हैं। परन्तु अभी तक एक बड़ा भारी प्रश्न हमारे सामने है, जिसको हल किये बिना शुद्धि बेकार है। जो लोग कई पीढ़ियोंसे मुसलमान बन गये हैं, जिनके वंशका अब पता नहीं है, जो मुसलमानों में एक दम मिल गये हैं अथवा यों कहिये कि जन्मके मुसलमानों की शुद्धि करनो हमारे लिये व्यर्थ हो रहा है। उनके पचाने की शक्ति हममें नहीं है। इसका कारण हमारा वर्तमान जात पांत का बन्धन है।

जात पांतका तोड़ना उतना आसान नहीं है जितना लोग समझ रहे हैं। अतीत कालसे आई हुई हिन्दू जातपांत को, चाहे उसमें असत्यता, आडम्बर ही क्यों न भरा हो, एक दम तोड़ ताड़कर अलग कर देना आर्यसमाजियों के लिये भी अशक्य हो रहा है। इसका कारण जातीय वहिष्कार है। वर्तमान हिन्दू कौम, जबकि अपनी ही उपजातियों को अपने में

मिलाने से कोसों दूर भाग रही है, तब यह कैसे आशा की जा सकती है कि यह मुसलमानों को शुद्ध करके अपने में हजम कर सकती है। जब हिन्दू लोग अपने भाई बन्धु कुटुम्ब से बहिष्कार किये जाने पर दण्ड देकर उनसे मिलने के लिये बराबर उत्सुक रहते हैं तो क्या मुसल्मानों में यही सामाजिक आकर्षण मनुष्य स्वभाव से परे है? वे कब चाहेंगे कि अपनी जमाअत छोड़कर एक ऐसे स्थान पर जावें, जहां साथ देने वाला कोई नहीं? शुद्ध हुये मुसलमानों की दशा तो "धोबीका कुत्ता न घर का न घाट का" ठीक इस कहावत के अनुसार देखने में आती है। क्या उनके साथ यौनसम्बन्ध करने को कोई तैयार होता है? नहीं, फिर मुसलमानों को शुद्ध करके उनके जीवन को बरबाद करना क्या सुधारकों का कर्तव्य है? अपने हृदय पर हाथ रखकर वे स्वयं विचार करें कि शुद्ध हुए भाइयों के साथ हमारा यह व्यवहार अमानुषिक है या नहीं? बड़े बड़े प्रतिष्ठित घराने वाले मुसलमान मुसलमानी धर्म की संकीर्णता से ऊब उठे हैं, परन्तु शुद्ध हुये लोगोंकी दशाका अनुभव करके वे आते नहीं। इसलिये आवश्यकता है कि लोग जातपांत के बन्धन को ढीला करें।

यह तो पहले दिखलाया जाचुका है, वर्तमान यवन ईसाई मुसलमान सबही आर्योंकी सन्तानें हैं। देशकाल स्थानके भेद से सबके रहन सहन तथा सामजिक धर्ममें भिन्नता होगई है। यदि इस भिन्नता को सदाचार की शिक्षासे धीरे धीरे हटानेका प्रयत्न किया जावे तो संभव है कि इस काममें सफलता प्राप्त हो परन्तु जब तक जात पांतका वृथाबन्धन लगा रहेगा, तब तक हमारे लिये शुद्धिका द्वार बन्द ही रहेगा।

तालाब का पानी गन्दा और नदी का पानी साफ क्यों

रहता है ? तालाब के जलमें परिवर्तन नहीं होता, किन्तु नदीके जलमें परिवर्तन होता रहता है। यही नियम समाज का है। यदि कोई समाज अपने नियमों को देश कालके अनुरूप परिवतन नहीं करता तो उसकी मृत्यु अवश्यं भावी है। संसारमें इसके प्रमाण भरे पड़े हैं।

इसलिये अपने पूर्वजोंके समान देशकाल को देखकर हमें अपने नियमों में परिवर्तन करना पड़ेगा। और शुद्धिके द्वारको और बड़ा करने के लिये जात पांतके व्यर्थ ढंकोसले को तोड़ना पड़ेगा। हमारे अन्धविश्वासी सनातनी तथा कुछ आर्यसमाजी भी कहते हैं कि इससे वर्णसंकरता बढ़ेगी। परन्तु लोगोंका यह ख्याल ग़लत है। पहले अपनी वंशावली देख लो, तब तुम्हें पता लगेगा कि जिस दोष से आप मुक्त होना चाहते हैं, वह दोष तो आपमें पहले से ही मौजूद है। वर्णसंकरता की सृष्टि आधुनिक स्मृतिकाल की उपज है। आर्य लोग वर्तमान प्रकार की वर्णसंकरता नहीं मानते थे। इसके लिये हमारे पास सैकड़ों प्रमाण मौजूद हैं। आपकी जिज्ञासा की शान्तिके लिये मैं आप लोगों के सन्मुख आर्यों की वंशावली उपस्थित करता हूं। आप विचार कर देख लें कि आप लोगोंका विचार कहां तक सत्य है।

बृहस्पतिकी स्त्री ताराको चन्द्रमाने बलात्कार हरण करलिया उससे बुध पैदा हुये। बुध ने इलानाम की स्त्री को गन्धर्व विवाहसे ग्रहण किया जिससे पुरुरवा पैदा हुये। पुरुरवाने उर्वशी नामक स्वर्गीय वेश्यासे सम्बन्ध जोड़ लिया उससे ७ लड़के हुये। उनमें अमावसुके वंशमें गाधि हुये जिनकी कन्या सत्यवतीकी शादी ऋचीकसे हुई जिससे भृगुवंश (ब्राह्मणवंश) चला।

गाधिके पुत्र विश्वामित्र हुये जो ब्राह्मण हुये जिनके वंशमें आजभी कौशिक और विश्वामित्र गोत्रवाले ब्राह्मण माने जाते हैं। पुरुरवाके दूसरे पुत्र आयुके वंशमें गृत्समद शौनक ब्राह्मण हुये। शौनक के वंशमें ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र चारों हुये। इसी वंशमें भार्गभूमि हुये जिनसे चारो वर्णों का वंश चला। आयु के पुत्र नहुषने असुर कन्या शर्मिष्ठा और शुक्राचार्य की कन्या देवयानी से शादी की। देवायानो से यदुवंश और तुर्वसुवंश चला। यदुवंश की शाखा चेदिवंश है जिसमें शिशुपाल हुआ। पुरुवंशमें ब्राह्मण क्षत्रिय दोनों हुये। वत्सगर्ग कृपाचार्य आदि ब्राह्मण इसी वंशसे हुये हैं। इसी वंशमें बलि हुये। जिनकी स्त्रीमें नियोग द्वारा अंग वंग कलिंगादि क्षत्रिय और ब्राह्मण दोनों हुये। कण्व मेधातिथि शतानन्द मौद्गल्य ब्राह्मण इसी वंशसे उत्पन्न हुये। दुष्यन्तने शकुन्तला से विवाह किया जिसके वंशमें हुये जो ब्राह्मण प्रसिद्ध हुये। त्रय्यारुणि पुष्करिण और कपि इसी वंशमें ब्राह्मण प्रसिद्ध हुये। कहां तक गिनावें बंशावली बहुत बड़ी है। इस बंशमें चारों वर्णके लोग कर्म वंशसे होते गये। परशुराम आदि जो ब्राह्मण माने जाते हैं इनकी बंशावली तो इस भ्रमको और भी दूर कर देती है। भृगुने पुलोमा से शादी की इससे च्यवन पैदा हुये च्यवनने राजा शर्यातिकी कन्यासे शादी की जिससे आप्रवान और दधीच पैदा हुये। दधीच से सारस्वत बंश चला। आप्रवान ने नहुष की कन्या ऋची से शादी की जिससे और्वऋषि पैदा हुये। और्वसे ऋचीक पैदा हुये जिसने गाधिकी कन्या सत्यवती से शादीकी जिससे जमदग्नि हुये जमदग्निने राजा रेण की कन्या रेणुका से शादी की जिससे परशुराम हुये अब बतलाइये वर्णसंकरता कहां चली गई ?

राजा लोमपादकी कन्या शान्तासे ऋष्यश्रृंगकी शादी हुई जिससे ब्राह्मण वंश चला। विदर्भ राजकी कन्या लोपामुद्रा से अगस्त्य का विवाह हुआ। सौभरि की शादी मान्धात्ताकी कन्याओंसे हुई जिनसे ब्राह्मण वंश चला। ऐसे ही सूर्य वंशमें राजा कल्माषपाद की स्त्री से वशिष्ठने नियोग द्वारा सन्तान उत्पन्नकी जिससे आगेका सूर्य वंश चला।

यह थोड़ासा उदाहरण दिया गया है। लेख बढ़ ज़ाने से इसको यहीं छोड़ता हूं। अब आप इतने परसे विचार कर सकते हैं कि आप लोगोंका विचार सत्य है या असत्य है? ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रका पहले कोई अलग अलग वंश नहीं था। इसके लिये प्रमाणका अभाव है। जो ब्रह्माके मुखादि से चातुर्वर्ण्य की उत्पत्ति मानते हैं उन्हें उक्त प्रमाणों पर भली भांति विचार करके अपने हठको छोड़ देना चाहिये। उनके पक्षका पोषक एक भी प्रमाण नहीं है। गुण कर्म स्वभाव से एक ही वंशमें ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र हुयेहैं। जब ऐसे प्रमाण हमारे पास मौजूद हैं, तब कोई कैसे कह सकता है कि शुद्ध हुये सच्चरित्र लोगोंको अपनेमें मिला लेने से वर्ण संकरता होगी जो जिस वर्णके योग्य हो, उसको उसी वर्णमें रख देने से और तदनुकूल उसके साथ व्यवहार करनेसे शुद्धिकी समस्या आसानीसे हल होसकती है। आज कल जिसे हम म्लेच्छ कहते हैं वे तुर्वसु की सन्ताने हैं। महाभारत खोलकर देखो। ताल जंघादिकों के म्लेच्छ बनने की कथा पहले दे चुका हूं।

अब अन्तमें दो चार शब्द कह कर इस शुद्धिके लेख को समाप्त करता हूं। शुद्धि सनातन है, इसके लिये शास्त्रों के सैकड़ों प्रमाण इस पुस्तक में दिये गये हैं। हिन्दुओं के अन्दर

खान पान छूआ छूत का ढकोसला अशास्त्रीय है, वर्ण संकरता का भय निराधार है इसके प्रमाण भी सविस्तार आ चुके हैं। भगवान् लोगोंको सुबुद्धि दे ताकि लोग पक्षपात छोड़कर जाति की उन्नति में साथ दें। शम् ॥

* इति *

मुद्रक—महादेव प्रसाद—
अर्जुन प्रेस, कबीर चौरा, काशी।

मृत्युविजयी यतीन्द्रनाथ दास

"का वर्षा जब कृषि सुखाने ।
समय चूक फिर का पछिताने ॥"

गोस्वामी तुलसी दासजी के उक्त शब्दों में आपको हाथ मसोस २ कर पछताना पड़ेगा। ऐसा कौन भारत का लाल होगा जो आत्मत्यागी वीर यतीन्द्रका नाम न सुना हो? अपने सिद्धान्त पर अटल, कार्यक्षेत्रमें चंचल, सच्चे धर्मवीर तथा राष्ट्रवीर "यतीन्द्र दास" की इतनी बड़ी जीवनी अभी तक नहीं छपी है। पुस्तक के परिचय में इतनाही कह देना यथेष्ट होगा कि इसमें स्व० श्रीयतीन्द्र नाथ दास का विस्तृत जीवन चरित्र, भगतसिंह तथा बटुकेश्वर दत्त का विशद बयान, काकोरी दिवसके राजद्रोहात्मक भाषण, पबलिक सेफटी बिल (बोलशेवी बिल) का विश्लेशण, अनशनबिल (Hunger Strike Bill) का उत्थापन, आयरलैन्डके स्वाधीनता पुजारी श्री मैकस्विनी तथा विश्वहित चिन्तक जान हावार्ड की जीवनियां आदि पठनीय विषय दिये गये हैं। देशभक्त श्रीयतीन्द्रने नवयुवकों को चेतावनी दी है कि उठो,। आलस्यको त्यागो, भारत माता बलिदान चाहती हैं। उन्होंने जो शंखनाद किया है उन्हींके शब्दोंमें पढ़ते ही बनता है। पुस्तक मुर्दोंमें भी जान डाल देने वाली है। १८५ पृष्ठ। मूल्य केवल १) रुपया

सरल संस्कृत-प्रवेशिका

संस्कृत भाषा में प्रवेश करने के लिये छात्रों को जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, उन्हें प्रायः सब विद्यार्थी जानते हैं। आज कल संस्कृत सिखलाने की परिपाटी अत्यन्त दूषित है। हिन्दी व्याकरण तथा भाषा का साधारण ज्ञान भी न रखने वाले विद्यार्थियों को पहले ही पहल लघुकौमुदी आरंभ करा दी जाती है परिणाम यह होता है कि विद्यार्थी दो दो वर्ष तक लघुकौमुदी में सिर मारकर हताश हो छोड़ देते हैं और संस्कृत भाषा पर कठिनाई का दोष मढ़ते हैं। इस कठिनाई को दूर करने के लिये १०-१२ वर्ष के अध्यापनके अनुभव के पश्चात् यह उक्त पुस्तक लिखी गई है जिसके द्वारा दूसरे ही दिन से विद्यार्थी अनुवाद करने का मार्ग सीखने लगता है और प्रतिदिन उसकी उत्सुकता बढ़ती जाती है। दोनों भागों के पढ़ने के बाद आप लघुकौमुदी क्या, सिद्धान्तकौमुदी के विद्यार्थीयों का टक्कर ले सकते हैं। इस प्रकार की उपयोगी पुस्तक अभी तक हिन्दी भाषा में नहीं है आप देखकर स्वयं मेरे कथन का अनुमोदन करेंगे। जो लोग संस्कृत भाषा सीखने से निरास हो गये हैं वे लोग एक बार इस पुस्तक से काम लें फिर देखें कि उन्हें संस्कृत के व्याकरण का ज्ञान कितनी आसानी से हो जाता है। बिना लघुकौमुदी, या सिद्धान्तकौमुदी छुए, आप इन पुस्तकों द्वारा संस्कृत का ज्ञान पर्याप्त कर सकते हैं। प्रथमा और मध्यमाके विद्यार्थियों के लिये भाषान्तर translation करने के लिये इससे बढ़कर आपको दूसरी कोई पुस्तक उपयोगी न मिलेगी। आप देखकर परीक्षा कर लें। मूल्य १)

लेखक की अन्य रचनायें तथा अनुवाद

१ वेद पशुयज्ञ मूल ।)

२ वैदिक वर्णव्यस्था ≡)

३ सनातन धर्म रहस्य =)

४ महाराणा प्रताप १)

५ अजेय तारा १।।)

६ विश्राम बाग १।।)

समस्त पुस्तकों के मिलने का एक मात्र पता—

चौधरी एण्ड सन्स,

लाजपतराय रोड, बनारस ।